चन्दामामा
माँ - बच्चों का मासिक पत्र
50
8

Photo by Anant Desai

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

लो, हम नीचे चले !

प्रेषक :
पुरुषोत्तम दास गुबरेले, होशंगाबाद

अक्तूबर १९५८

विषय - सूची

★

एक प्रति ५० नये पैसे　　　　वार्षिक चन्दा रु. ६—००

किसी समय
किसी भी स्थल पर
हर किसी अवसर पर
अधिक सौंदर्य के लिये
खटाऊ
वायल्स

मेट्रिक प्रणाली

क्या है ?
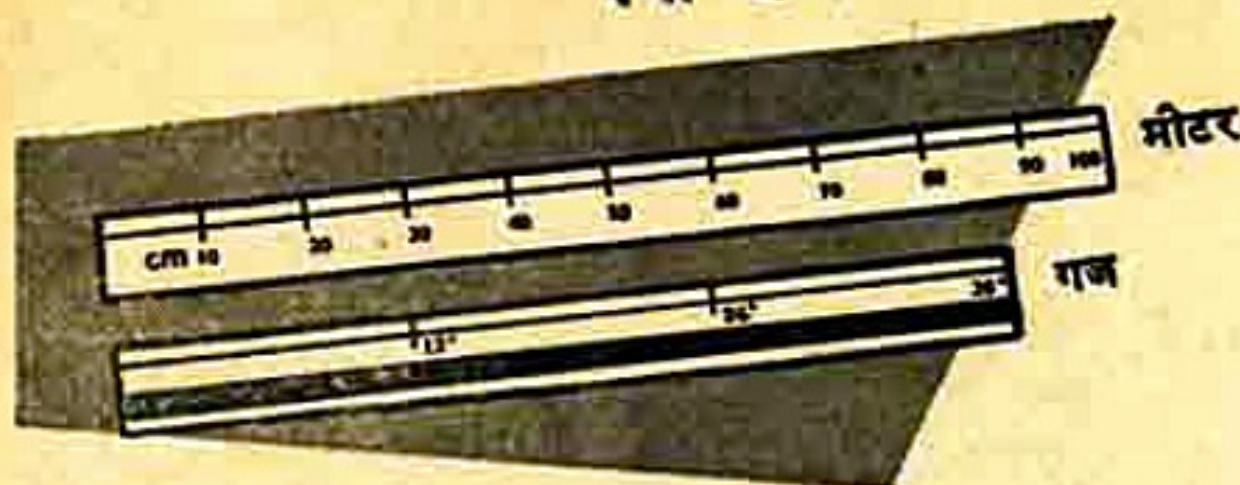
मेट्रिक प्रणाली का नामकरण मीटर से हुआ है जो कि लम्बाई नापने की आधारभूत इकाई है । सभी आधुनिक प्रणालियों की तरह ही इस प्रणाली में भी हिसाब-किताब का आधार १० होता है । लम्बाई, तौल या घनफल की किसी भी इकाई को १० से भाग दे देते हैं अथवा गुणा कर देते हैं ।

मेट्रिक प्रणाली में इकाई से बड़े पैमानों के नाम के पूर्व डेका (१० गुना), हेक्टो (१०×१०=१०० गुना), और किलो (१०×१०×१० =१,००० गुना) शब्द जोड़े जाते हैं तथा उप-इकाइयों के पहले डेसी (१/१०), सेंटी (१/१००) और मिली (१/१,०००) शब्द जोड़ देते हैं ।

अक्तूबर, १९५८ से मेट्रिक प्रणाली के प्रवर्तन का प्रारम्भ

लम्बाई नापने के मेट्रिक पैमानों को जानिये

लम्बाई नापने की आधारभूत इकाई

मीटर

=लगभग ४० इंच

१ किलोमीटर=५ फर्लांग

उप इकाइयां

१० मिलीमीटर =१ सेंटीमीटर
१० सेंटीमीटर =१ डेसीमीटर
१० डेसीमीटर =१ मीटर

बड़े पैमाने

१० मीटर =१ डेकामीटर
१० डेकामीटर =१ हेक्टोमीटर
१० हेक्टोमीटर =१ किलोमीटर

भारत सरकार द्वारा प्रसारित

अतिशय नवीन
और सुवासिक...
रेमि
टायिलेट
पाउडर
एम. एस. तमिलरसी

सूचना
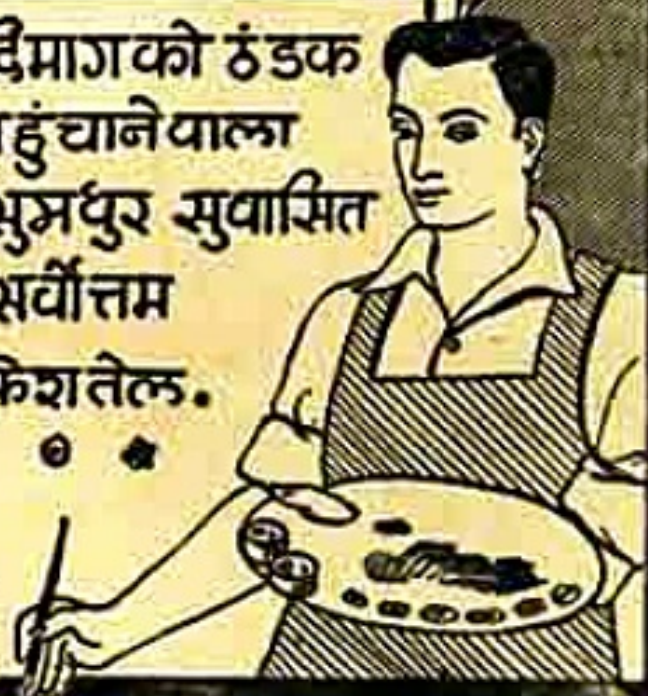
एजेन्टों और ग्राहकों से निवेदन है कि मनीआर्डर कूपनों पर पैसे भेजने का उद्देश्य तथा आवश्यक अंकों की संख्या और भाषा संबंधी आदेश अवश्य दें। पता – डाकख़ाना, ज़िला, आदि साफ़ साफ़ लिखें। ऐसा करने से आप की प्रतियाँ मार्ग में खोने से बचेंगी।

—सर्क्युलेशन मैनेजर

★

ग्राहकों को एक ज़रूरी सूचना!

ग्राहकों को पत्र-व्यवहार में अपनी ग्राहक-संख्या का उल्लेख अवश्य करना चाहिये। जिन पत्रों में ग्राहक-संख्या का उल्लेख न होगा, उन पर कोई ध्यान नहीं दिया जा सकेगा। पता बदल जाने पर तुरन्त नए पते की सूचना देनी चाहिए। यदि प्रति न मिले तो १० वीं तारीख से पहले ही सूचित कर देना चाहिए। बाद में आनेवाली शिकायतों पर कोई ध्यान नहीं दिया जाएगा।

व्यवस्थापक, "चन्दामामा"

पार्ले के
ग्लूको
बिसकुट
Parle Gluco Biscuits
विटामिनों से
भरपूर

अमृतांजन

दर्द को निकाल देता है

गत ८५ वर्षों से यह मशहूर है कि अमृतांजन हर एक प्रकार के दर्द के लिये एक अत्यधिक प्रभावशाली लेप है। मरोड़, ऐंठन, सरदी, मोच, सिरदर्द, पीठ या दांत का दर्द, और अन्य पीड़ाओं के दर्दों पर उसका असर बहुत जल्द होता है और तुरन्त आराम मिलता है। अमृतांजन का कोई बुरा असर नहीं होता क्यों कि यह सिर्फ दर्द के स्थान पर ही लगाया जाता है।

आप ही आज़माइए

थोड़ा सा बाम हथेली पर लीजिये और दर्द की जगह पर मलिये। दर्द से आप को फ़ौरन ही आराम मिलेगा।

सबसे पहले अमृतांजन का ही प्रयोग कीजिये। ९ में से ७ प्रकार के दर्दों को यह निश्चय ही निकाल देता है।

अमृतांजन लिमिटेड
मद्रास-४
शाखाएं: बम्बई-१ तथा कलकत्ता-१

अमृतांजन इन्हेलर से साँस लेने में आसानी होती है।

गुण में अतुल्य, पर दाम में कम

"आइरिस इन्क्स"

हर फ़ाउन्टेन पेन के लिए उम्दा,
१, २, ४, १२, २४ औन्स के बोतलों में मिलता है।

निर्माता :

रिसर्च केमिकल लेबोरटरीज

चन्दामामा

संचालक : चक्रपाणी

हम इस बार कुछ अपनी और कुछ आपकी बात कहेंगे।

"चन्दामामा" में वर्षों से फोटो प्रतियोगिता का स्थायी स्तम्भ चला आ रहा है। इसका अपना विशेष आकर्षण है। उपयोग भी है।

हमारे पास हजारों परिचयोक्तियाँ प्रति मास आती हैं। उनमें से एक को ही पारितोपिक मिलता है। प्रतियोगिता का उद्देश्य भी यही है।

इन परिचयोक्तियों को चुनना आसान काम नहीं है। परन्तु यह उतना कठिन न होगा यदि हमारे पाठक उन्हें नियमानुसार, निश्चय समय में ही भेजें। कई उनको लिफाफों में भेजते हैं। कई अन्तर्देशीय पत्रों में। यह नियम के विरुद्ध है।

परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही होनी चाहिए। उन पर सिवाय आपके पते और परिचयोक्तियों के कुछ नहीं होना चाहिए। जवाबी पत्र भी अनावश्यक हैं। हम आशा करते हैं कि आप इसका ध्यान रखेंगे।

वर्ष : १०   ओक्टोबर १९५८   अंक : २

मुख-चित्र

संजय के हस्तिनापुर की ओर रवाना होते ही युधिष्टिर ने कृष्ण से कहा—"अब आप बताइये कि हमें क्या करना होगा। राज्य न मिलने पर भी संजय ने हमें युद्ध न करने के लिए कहा है। मैने केवल पाँच गाँव ही माँगे थे। युद्ध, रक्तपात मुझे पसन्द नहीं है।" तब कृष्ण ने कहा—"भिक्षा माँगना क्षत्रिय का धर्म नहीं है। मैं उनके पास दूत होकर जाऊँगा और तुम्हारा राज्य तुम्हें देने के लिए कहूँगा। परन्तु मुझे सन्देह है मैं इस काम में सफल न होऊँगा। अगर बातों से काम न बना तो मैं कहूँगा कि तुम्हारी विजय निश्चय है। धर्म तुम्हारे साथ है। ऐसा कहने से दुर्योधन के कुछ साथियों का मन बदल सकता है।"

तब भीम ने कहा—"कृष्ण! युद्ध की बातचीत से दुर्योधन को डरा न देना। जहाँ तक सम्भव हो वहाँ तक भाईचारे से काम लो।" भीम की शान्ति प्रियता देखकर कृष्ण को आश्चर्य हुआ। भीम को उकसाने के लिए इधर उधर की बातें कहीं। "क्या तुम यह सोच रहे हो कि भय के कारण मैं सन्धि करने की सोच रहा हूँ। युद्ध में मैं उन कौरवों को मार काटकर फेंक दूँगा। मेरा बल पराक्रम तुम ही देखोगे!" भीम ने शेखी मारी। अर्जुन ने कहा कि वह युधिष्टिर की बात का समर्थन कर रहा था। अगर सन्धि सम्भव न हो तो कृष्ण अपनी इच्छानुसार बातें कर सकता है। नकुल ने भी ठंडे दिमाग से काम लिया।

परन्तु सहदेव ने कहा "मुझे धर्म से कोई वास्ता नहीं है। कौरव भले ही शान्ति चाहें, हम युद्ध करके उनको नष्ट कर देंगे।" सात्यकी ने सहदेव का समर्थन किया।

आखिर द्रौपदी ने अपने केशों को दाहिने हाथ में पकड़कर रोते हुए कृष्ण के पास आकर अपने कष्टों को सुनाकर कहा—"मेरा जिन्होने इतना अपमान किया था वे दुष्ट अब भी जीवित हैं। ऐसा करो कि वे मारे जायें।" वह रोने लगी। "रोओ मत तुमसे हज़ार गुना अधिक उनकी स्त्रियाँ रोयेंगी। मेरा विश्वास कर।" कृष्ण ने उसको सांत्वना दी।

काकोलूकीय

स्थिरजीवि की सुनकर बातें
औ' रह-रहकर उसकी 'हाय',
सभी मन्त्रियों को बुलवाकर
अरिमर्दन ने माँगी राय।

प्रथम मन्त्री 'रक्ताक्ष' नाम का
बोला—"मेरा यही विचार,
बिना अधिक सोचे-समझे अब
दें इसको जल्दी हम मार।

दुर्बल ही हो भले शत्रु यह
पर न करें इसका एतबार,
पता नहीं कब अवसर पाकर
करे हमारा ही संहार।

जनम जनम का वैरी कौआ
नहीं कभी हो सकता मीत,
टूटा सब कुछ जुड़ सकता है।
सिर्फ न जुड़ती टूटी प्रीत।

एक कहीं रहता था ब्राह्मण
करता था मेहनत दिन-रैन,
पर न खेत में होता कुछ भी
रहता था दुख से बेचैन।

एक दिवस दोपहरी थी औ'
बहुत तेज थी उस दिन घाम,
ब्राह्मण पहुंचा एक वृक्ष की
छाया में करने विश्राम।

फन फैलाये नागराज को
वहाँ देख उसने तत्काल,
समझ लिया है क्षेत्रदेवता
शायद नाग यही विकराल।

ले आया वह एक कटोरा
दूध कहीं से जाकर माँग,
और दिया रख उसी जगह पर
जहाँ दिखा था फणिधर नाग।

श्री "भारतीभक्त"
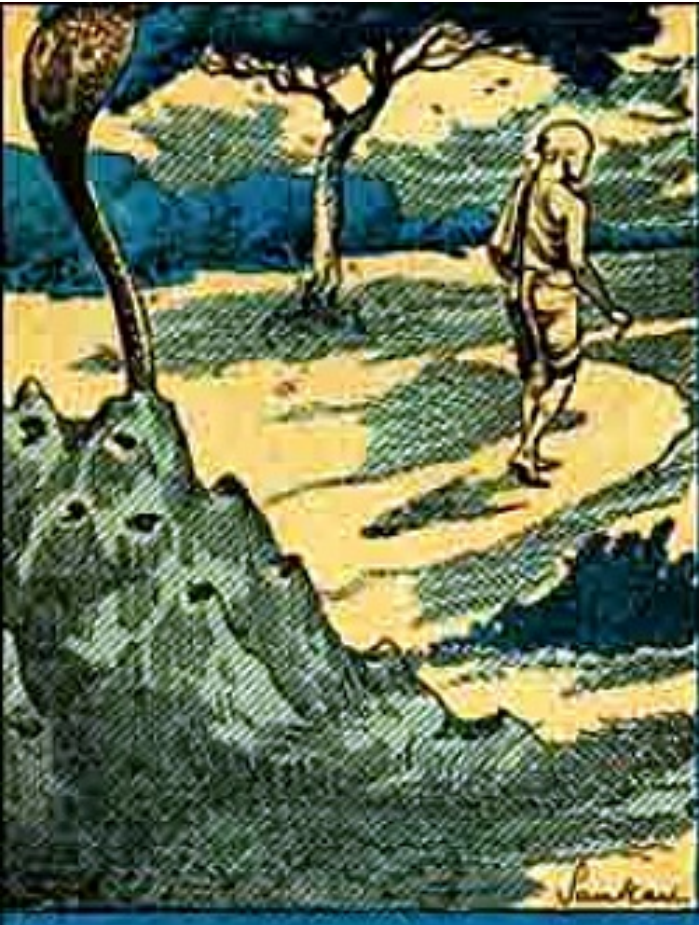
दिवस दूसरे उस ब्राह्मण ने
देखा जब जाकर वह पात्र,
मुहर एक सोने की लखकर
पुलक उठा उसका हट गात्र।

तब से रोज दूध के बदले
मुहर एक देता था नाग,
ब्राह्मण की सोयी थी किस्मत
उठी वही सहसा अब जाग।

किसी काम से एक बार जब
ब्राह्मण जाने लगा विदेश,
दूध नाग को पहुँचाने का
कर गया पुत्र को ही निर्देश।

किया पुत्र ने वही, उसे जो
मिला पिता का था आदेश,
किंतु मुहर सोने की लखकर
रहा न उस में धीरज लेश।

'करूँ मारकर अभी नाग को
गड़े खजाने पर अधिकार',
यही सोचकर उसने सहसा
नागराज पर किया प्रहार।

लाठी पूरी लगी नहीं थी
उठा नाग तत्क्षण फुंकार,
डँसा क्रोध में आकर उसने।
बच न सका वह विप्रकुमार!

ब्राह्मण जब वापस आया तो
हुआ ज्ञात उसको सब हाल,
दोषी अपने बेटे को ही
लिया मान उसने तत्काल।

शरणागत पर दया न करने
से होता ऐसा ही हाल,
पद्मसरोवर के हँसों का
भी तो हुआ बुरा था हाल।

सोने के थे हँस सभी वे
राजा रखता नजर विशेष,
क्योंकि उसे मिलते थे उनसे
'पर' सोने के सदा अशेष।

बड़ा एक सोने का पक्षी
एक बार उस सर में आया,
किंतु सरोवर के हँसों ने
उसे वहाँ से धता बताया।

मजबूरन उस पक्षी ने तब
राजा से जा किया निवेदन—
'हँस न देते आश्रय मुझको
और आपका करते निंदन।'

यह सुनकर राजा के मन में
बढ़ा बहुत ही क्रोधावेश,
'मार सभी हँसों को लाओ!'—
दिया सैन्य को यह आदेश।

इतना कह वह ब्राह्मण झटपट
गया नाग के बिल के पास,
कहा—'देवता, क्षमा करो अब
अपराधी सचमुच यह दास।'

किंतु नाग ने एक रत्न दे
कहा—'मित्रता रही नहीं,
टूटे पर सब जुड़ सकता है,
जुड़ती केवल प्रीत नहीं।'

रक्ताक्ष ने जब कथा सुना यों
अपने मन का किया मंथन,
क्रूराक्ष नाम मन्त्री तब बोला—
"नहीं इसे मारें हे राजन्!

कथा कबूतर के जोड़े की
नहीं आपको क्या है ज्ञात?
शरणागत की क्षुधा मेटने
दिया जला जिसने निज गात?

कबूतरी थी फँसी बिचारी
और कबूतर था बेचैन,
झँझा का था शोर बहुत औ'
बड़ी भयंकर थी वह रैन।

व्याध का पर कबूतर ने
करके अद्‌भुत वह सत्कार—
"दिखा दिया जग को शरणागत
का करना कैसे उपकार!"

मन्त्री दीमाक्ष से अरिमर्दन
ने पूछी जब उसकी राय,
क्रूराक्ष से मिलती-जुलती
ही दे दी उसने भी राय।

अब देखा नृप अरिमर्दन ने
मन्त्री वक्रनाश की ओर,
'इसे न मारें' वक्रनाश ने
दिया इसी पर ही तो जोर।

बोला वह यों—"दो बछड़े थे
किसी दीन ब्राह्मण के पास,
उन बछड़ों पर टिकी हुई थी
उसके जीवन की सब आस।

एक रात ब्राह्मण सोया था
आया एक वहाँ पर चोर,
एक पिशाच भी उसी समय
आ धमका सहसा उस ओर।

उसे देखकर कहा चोर ने—
"अरे, कौन आया इस ठौर?"
उत्तर मिला—"मैं पिशाच हूँ
ब्राह्मण होगा मेरा कौर!"

कहा चोर ने—"अच्छा मुझको
बछड़े जरा चुराने दो जी।"
पिशाच बोला—"नहीं, मुझेही
पहले भूख मिटाने दो जी!"

इसी बात पर वे दोनों जब
करने लगे बहुतही शोर,
हलचल सुनकर उस ब्राह्मण की
टूट गई निद्रा अति घोर।

पढ़कर उसने मन्त्र उसी क्षण
झट पिशाच को दूर किया,
और चोर को भी डंडे से
मार-मारकर दूर किया।

इसी हेतु कहता मैं राजन्,
इस कौए की मत ले जान,
आपस में लड़ते वैरी तो
हो जाते हैं मित्र समान!"

प्रलय

ब्रह्मा ने भूमि पर मनुष्यों की सृष्टि करके उनसे कहा—"बेटो, जब तक मैं प्रलय न करूँ तब तक इस भूमि पर तुम आराम से जिओ।"

"प्रभो, अगर हमें आपने यह बताया कि प्रलय कब होगी तो हम यह निर्णय कर लेंगे कि हमें भूमि पर क्या क्या करना होगा।" मनुष्यों ने कहा।

"प्रलय कब होगी यह बताने के लिए मैं एक व्यवस्था करूँगा।" कहकर ब्रह्मा ने एक जगह तीन डंडे गाड़े। पहिले डंडे पर उसने ६४ छल्ले डाले। वे सब समान न थे। सबसे निचला छल्ला सबसे बड़ा था। उसके ऊपर का कुछ छोटा। उससे भी ऊपर का कुछ और छोटा। सबसे ऊपर का छल्ला सबसे छोटा था।

फिर ब्रह्मा ने तीन व्यक्तियों को बुलाकर कहा—"मैं तुम को वर देता हूँ कि तुम प्रलय तक जीते रहो। तुम्हारा काम यह है कि इन छल्लों को इसी क्रम में तीसरे डंडे में डालना। बड़े छल्ले पर छोटा छल्ला रखा जा सकता है पर छोटे छल्ले पर बड़ा छल्ला नहीं रखना चाहिये। दूसरे डंडे का तात्कालिक रुप से छल्ले रखने के लिए ही उपयोग करो। तुम तीनों बारी बारी से यह काम करो। जिस दिन ये चौसठ छल्ले, इसी क्रम में तीसरे डंडे पर चढ़ा दिये जायेंगे उसी दिन प्रलय आयेगी। अच्छी तरह समझ लो।"

अगले क्षण ब्रह्मा अन्तर्धान हो गया। ब्रह्मा द्वारा नियुक्त पहिला व्यक्ति, जैसा उसने कहा था, करने लगा। उसने सबसे छोटे छल्ले को लेकर दूसरे डंडे पर रखा, उससे बड़े छल्ले को तीसरे डंडे पर रखा, उसके ऊपर पहिले छल्ले को रखा। फिर

तीसरे को दूसरे डंडे पर रखा, इस प्रकार वह काम करने लगा।

उनमें से यह देखकर एक ने कहा—"इस काम में तो अधिक देर नहीं लगेगी। हम मनुष्यों को इस भूमि पर कम ही समय मिला है। इस थोड़े समय में हम क्या कर सकते हैं!"

तीसरा व्यक्ति कुछ न बोला। एक घड़ी में पाँच छः छल्ले तीसरे डंडे पर चढ़ा दिये गये। तो भी वह न घबराया। उसने हिसाब लगाया कि अगर तीनों ने अविराम काम किया तो वे छल्लों को एक लाख बार एक दिन में इधर से उधर रख सकते थे। वह काम कितनी बार करने से ब्रह्मा का काम पूरा होगा, उसका हिसाब करने के लिए उसको बहुत-सा समय लगा।

तब दुनियाँ में गणित शास्त्र न था। इसलिए इस व्यक्ति को गणित शास्त्र बनाना पड़ा। उसने उस शास्त्र की सहायता से निर्धारित किया कि इन छल्लों को जब तक १८,४४६,७४४,०७३,७०९,५५४,६१५, नहीं बदला जायेगा, तब तक वे तीसरे डंडे पर न पहुँचेंगे।

उन्होंने मालूम किया कि रोज़ करीब एक लाख बार उनको बदलने के लिए लगभग पचास हज़ार करोड़ वर्ष लगेंगे। उसने अपने साथियों से कहा—"भाइयो! हम यह काम छोड़ सकते हैं क्योंकि पचास हज़ार करोड़ वर्षों तक प्रलय न आयेगी। इस बीच में मनुष्य चाहे जितने आश्चर्यजनक कार्य कर सकते हैं।"

उसके गणित शास्त्र का अभ्यास करके बाकी दो भी गणित में प्रवीण हो गये। उस गणित शास्त्र के साथ तुरत और शास्त्र भी प्रारम्भ हुए।

[३]

[सर्पकेतु के नौकरों द्वारा अपने मालिक सूर्यवर्मा के मारे जाने पर, उसका सेवक सुबाहु, यह समाचार सूर्यवर्मा के लड़के, चन्द्रवर्मा को पहुँचाने घोड़े पर सवार होकर वीरपुर के लिए रवाना हो गया। रास्ते में सर्पकेतु के सैनिकों ने उसका घोड़ा मार दिया। वह पैदल चलकर, जब पहाड़ से उतरा तो उसे मशाल लिये गाँववाले दिखाई दिये। वह ज्यों ही उनके पास पहुँचा तो कुछ घुड़सवारों ने "होय" कहकर उसे घेर लिया। बाद में—]

सुबाहु एक क्षण के लिए स्तब्ध-सा हो गया। उसे डर लगा कि उसका अन्त निकट आ गया था। अगर यह विपत्ति, वीरपुर में उसके मालिक की मृत्यु की सूचना देने के बाद आती तो वह परवाह न करता। इस समय उसकी मृत्यु का भी वीरपुर राज्य के ऊपर बुरा प्रभाव पड़ेगा। अच्छा होगा यदि वह इन घुड़सवारों को धोखा दे सके। ये सब बातें बिजली की तरह उसके मन में कौंध रही थीं।

"कौन हो तुम! कहते क्यों नहीं हो!" पूछते हुए एक सैनिक ने आकर उसके केश खींचे, इतने में भीड़ में से एक ने कहा—"बिचारे उस बूढ़े भिखारी को मत सताइये। फाके करते करते शायद उसकी जबान ही गिर गई है।"

यह सुन सुबाहु चौंक गया। उसने सोचा कि मामूली भिखारी की तरह अभिनय करना कोई बड़ा काम न था। उसने अभिनय करने की ठानी। "बाबू, रोटी का इतना टुकड़ा, इतना...." सुबाहु ने घुड़सवार की ओर दयनीय दृष्टि से देखा। उसके घोड़े की लगाम पकड़ ली। और कराह-कराह कर भीख माँगने लगा।

"छी! यह क्या बला है—मैंने सोचा था कि यह कोई वीरपुर का भेदिया है।"—घुड़सवार घोड़ा छुड़वाकर तुरत जल्दी-जल्दी आगे बढ़ गया।

"यह भेदिया कैसा! शरीर में जान भी नहीं है। यह और इसके चीथड़े। शनि-सा है। जब तू अपने को ही नहीं ढो पाता है तो हाथ में इतनी मोटी लाठी क्यों ले रखी है!" एक और घुड़सवार ने पूछा।

"हुजूर....पहाड़ों में चीते, भेड़ियों को डराने के लिए..." सुबाहु ने बिना झिझके कहा।

यह जवाब सुनते ही घुड़सवार के साथ, और भी हँसते हँसते लोट-पोट हो गये। "अरे, भाई! तुम कितने बड़े शिकारी हो। एक पैर उठाकर दूसरा रख नहीं पाते हो और चीते और भेड़ियों को तुम क्या डराओगे। क्या कह रहे हो! शेखियाँ न मारो।" उन्होंने कहा।

"हुजूर! इतनी-सी रोटी दिलवाइये। फिर मेरे करतब देखिये। सप्ताह भर से सिर्फ पानी पीकर पेट भर रहा हूँ।" सुबाहु ने कहा।

घुड़सवारों ने उसकी बात न सुनी। उन्होंने घोड़ों को आगे बढ़ाते हुए कहा—"तुम जल्दी राक्षस टीले पर पहुँचो। वहाँ तुम्हें हथियार दिये जायेंगे। सवेरा

होने से पहिले बीरपुर हमारे हाथ में आ जायेगा। सर्पकेतु राजा की जय!" कहकर वे चले गये।

सैनिकों के जाते ही भीड़ में से कुछ लोगों ने आकर सुबाहु को घेर लिया। उनमें से एक ने उससे कहा—"अरे भाई, देखने में तो जवान मालूम होते हो। हाथ-पैर भी ठीक हैं फिर भीख माँगने की नौबत क्यों आई!"

"हुजूर! यह जानने के लिए पाँच बरस से इन पहाड़ों में, एक गुरु के पास साधना कर रहा हूँ। उनको बहुत दिनों तक मुझपर दया नहीं आई। अभी एक घंटा पहिले ही उनकी मुझपर कृपा दृष्टि हुई। उन्होंने पहाड़ पर से मशालों को दिखाते हुए कहा—"पाँच सालों से जो शनि तुझे पकड़े हुए है, वह आज सवेरे छूट जायेगा। यही नहीं, जो तेरे साथ आयेंगे उनका शनि भी छूट जायेगा। देख, वे जो मशालें दीख रही हैं, उनके पास जाओ। इसलिए जल्दी-जल्दी पहाड़ उतरकर यहाँ पहुँचा और आप सबसे मिल पाया।" सुबाहु ने निर्भय हो सराटे से कहा।

सुबाहु के यह कहते ही चारों ओर घेरे हुए आदमी हका-बका रह गये। उनके मुख से बात तक न निकली। फिर उनमें से एक ने चौंककर कहा—"इस पहाड़ पर रहनेवाले महापुरुष के बारे में सुना तो बहुत था पर कभी किसी ने देखा न था। आज सवेरे हम बीरपुर को लूटने जा रहे हैं। क्योंकि उनको दिव्य-दृष्टि प्राप्त है, इसलिए यह सब उन्हें पहिले ही मालूम था। हमारी विजय निश्चित है। आओ, जल्दी निकल पड़ो। तुम बिल्कुल बेफिक्र रहो।"

इतने में कुछ आदमी भागे भागे गाँव गये और उसके लिए रोटी और दूध ले आये। सुबाहू ने पेट भर उन्हें खाया। फिर उन्होंने उसके सामने नये कपड़े रखे। चीथड़े उतारकर उन्हें पहिनने के लिए कहा। उसे डर था कि उस पोषाक में कहीं उसे कोई पहिचान न ले। इसलिए उसने उनकी ओर प्रेम से देखते हुए कहा—"मित्रो! मैं तुम्हारी सहायता के लिए कृतज्ञ हूँ। परन्तु इस समय यदि मैं नये कपड़े पहिनूँगा तो गुरु की आज्ञा का उलंघन कर रहा हूँगा। जो शनि मुझे पकड़े हुए है, सबेरे छूट जायेगा। उसके बाद मैं इन्हें पहिनूँगा। तब तक आप इन्हें अपने पास रखिये।"

तुरन्त सब ने "जय" जोर से चिल्लाया। सुबाहू की ओर मुड़कर उन में से एक ने पूछा—"अच्छा तो अभी तक तुम्हारा नाम हमें नहीं मालूम हुआ है!"

"नाम, नाम!" सुबाहू कुछ हिचका। "माँ बाप का दिया हुआ नाम कुछ भी हो तो भी क्या है! शनि द्वारा इतने दिनों से सताया जा रहा हूँ। दर दर भटक रहा हूँ। गुरु की आज्ञा से, उसके

छूट जाने के बाद—"वह अभी कह ही रहा था कि भीड़ में से एक ने कहा। आज से हमारा शनि भी छूट रहा है। इसलिए आज से तेरा नाम शनिनर्दन है।" तुरन्त "शनिमर्दन की जय" के नारे बुलन्द होने लगे।

फिर वे सब मशालों की रोशनी में "राक्षस टीले" की ओर निकले। सुबाहु उनकी बातों से जान गया कि जो उसके साथ आ रहे थे वे बहुत गरीब थे। बेपढ़े थे। सर्पकेतु ने उनको धन-धान्य का लालच दिलाया था। इधर उधर के आश्वासन दिये होंगे। इसलिए ही ये वीरपुर लूटने के लिए तैयार हो गये थे।

"क्या वीरपुर का सामन्त, सूर्यवर्मा इतना अत्याचारी है?" सुबाहु ने उनमें से एक से पूछा।

उसका प्रश्न सुनते ही उसने हँसकर कहा—"इन सामन्तों में अत्याचारी कौन नहीं है? सूर्यवर्मा की बात तो हम नहीं जानते, पर सर्पकेतु का सा अत्याचारी फिर कभी पैदा न होगा? यह बात हम सब जानते हैं।"

"यह बात है तो हम वीरपुर लूटने के लिए क्यों जायें? अगर गये तो हम

सर्पकेतु की मदद कर रहे होंगे न!" सुबाहु ने पूछा।

तब उनकी बातचीत में पाँच छः आदमी और आकर शामिल हुये। उन्होंने सुबाहु के प्रश्नों पर हँसते हुए कहा—"हम सर्पकेतु की मदद करने नहीं जा रहे हैं। उसने वीरपुर को लूटने में हमारी मदद करने का आश्वासन दिया है। हम जो कुछ वहाँ से ला सकेंगे वह हमारा होगा। उसमें उसका कोई हिस्सा न होगा। यह हमने उससे पहिले ही तय कर लिया है।"

सुबाहु ने सोचा कि उन अनाड़ी, बेपढ़े, बिचारे गँवारों से बात करने से कोई फ़ायदा न था। उनकी दृष्टि में सब सामन्त समान थे। जब कभी किसी को मौका मिलता तो उन्हें लूटता। उसी तरह जब उनको मौका मिलता तो वे भी दूसरों को लूटेंगे। मौके की बात है। यही उनकी मनोवृत्ति है।

थोड़ी देर बाद, सब राक्षस टीले पर पहुँचे। वहाँ पहिले ही सैकड़ों आदमी इकट्ठे हुए हुए थे। उनमें कई के पास बड़ी-बड़ी मशालें थीं। कई सैनिक उनको कतार में खड़ा कर रहे थे। सुबाहु के जत्थे को भी एक जगह कतार में खड़ा किया गया।

तब नायक की पोषाक पहिने कुछ आश्विकों ने वहाँ एकत्रित लोगों से कहा—

"महाशक्तिमान, दयालु सर्पकेतु राजा की सहायता से तुम आज दारिद्र्य की पीड़ा से मुक्त हो जाओगे। अब हमारे सामने यही समस्या है कि हम वीरपुर नगर के अन्दर कैसे पहुँचें। अगर हम एक बार द्वारपालकों को चकमा देकर अन्दर पहुँच सके तो वहाँ कोई भी शक्ति हमारा

मुकाबला न कर सकेगी। इसलिए तुम में से सौ आदमी पहिले जायें और द्वार के पास खड़े होकर हाहाकार करें कि सर्पकेतु तुम्हारे गाँव लूट रहे हैं। यह हाहाकार सुनकर द्वारपालक द्वार खोल देंगे। तुरन्त तुम लोगों के रास्ता छोड़ देने पर, मामूली कपड़े पहिने हमारे सैनिक नगर में घुस जायेंगे। उसके बाद तुम अन्दर घुस सकते हो और जहाँ चाहो वहाँ जी भर शहर लूट सकते हो। पर तुम्हें समय समय पर "यशोवर्धन की जय" के नारे लगाने होंगे। यह जानकर कि तुम यशोवर्धन के आदमी हो, वहाँ के कुछ सैनिक तुमसे मुकाबला करने में हिचकेंगे। बचे हुओं को मामूली कपड़े पहिने हमारे सैनिक मार-काट देंगे।"

नायक का व्याख्यान खतम होते ही लोग "यशोवर्धन महाराज की जय" चिल्लाने लगे। सुबाहु यह जानकर हैरान रह गया कि वीरपुर पर आक्रमण करने के लिए इतनी जबर्दस्त साजिश हो रही थी। इनसे कुछ समय पहिले वीरपुर पहुँचकर, यदि उसने चन्द्रवर्मा को यह बता दिया तो उसको और नगर को बचाया जा

सकता है। पर इन सब की नज़र बचाकर कैसे भागा जाय? क्या किया जाय? सुबाहु मन ही मन सोचने लगा।

सुबाहु यह सोच रहा था कि लोग आगे की ओर बढ़े। वह पहिचान गया कि उनमें से कई मामूली कपड़े पहिने सर्पकेतु के सैनिक थे। सबसे आगे जाते हुये सौ आदमियों में सुबाहु भी जा मिला। देखते देखते वे नगर के द्वार के समीप पहुँचे। तुरत उनमें से कई रोते-धोते चिल्लाने लगे—"द्वार खोलो! सर्पकेतु के सैनिक हमारे गाँवों पर हमला कर रहे हैं। हमें

लूट रहे हैं। हमें मार रहे हैं। हमें सैनिक सहायता चाहिए। भाइयो! हमारी मदद करो।"

द्वारपालक अभी दुविधा में थे कि द्वार खोले जायें कि नहीं लोग फिर भयकंपित आवाज़ में चिल्लाने लगे—"राजा सूर्यवर्मा ही अब हमें बचा सकते हैं। हमें अपनी शिकायत उनसे करने दीजिये।"

तुरन्त द्वार खोल दिये गये। जो तबतक द्वार के पास थे एक तरफ़ हट गये। तुरन्त मामूली कपड़े पहिने सैनिक आगे बढ़े। उन्होंने अपने छुपाये हुए अस्त्र निकाले। पहरेदारों पर हमला किया। देखते देखते कई को मार दिया। कई को कैद कर लिया। और जल्दी-जल्दी वे नगर में प्रवेश करने लगे।

सुबाहु एक छलांग में द्वार पार कर गया। पहरेदारों की बगल में से आगे भागा। उसी समय पीछे से आवाज़ आई—"कौन है वह जो आगे भागा जा रहा है! सब को मिलकर चलना चाहिए। उसे पकड़ो।"

तुरन्त चार पाँच सर्पकेतु के सैनिक—"ठहरो ठहरो" चिल्लाते, सुबाहु के पीछे भागे। सुबाहु जानता था कि समय आ गया था जब उसे निश्चय करना था कि जीना है या मरना है। वह तुरन्त मुड़ा। एक सैनिक के पेट में ज़ोर से उसने लात मारी और उसके हाथ की तलवार उसने ले ली।

इतने में एक और सैनिक उसके पास आया। सुबाहु ने अपनी तलवार उसके कलेजे में भोंक दी। और सैनिकों को आता देख वह पीछे मुड़कर सीधे राजमहल की ओर भागा।

(अभी और है)

जादू का घोड़ा

[४]

[शापूर बादशाह का लड़का अम्मार जादू के घोड़े पर सवार होकर सना नगर पहुँचा। वहाँ की राजकुमारी को देखकर, उसको उससे प्रेम हो गया। सना का राजा, बदनामी के डर से, अम्मार का अपनी लड़की के साथ विवाह करने के लिए मान गया। अम्मार को इस तरह की शादी पसन्द न थी। इसलिए वह जैसे तैसे बचकर, सना नगर से निकल कर, अपने शहर में पहुँचा। उस सिद्ध को जेल से छुड़वाया, जिसने उसे जादू का घोड़ा दिया था। फिर एक सप्ताह बाद वह सना नगर पहुँचा। वहाँ बिना किसी के जाने नहर से मिला। फिर उसको साथ लेकर अपने देश पहुँचा। उसे नगर के बाहर, उद्यान में रखकर वह अपने पिता से मिलने गया। नहर को लिवा लाने के लिए राजा बाजे-गाजे के साथ निकला। परन्तु उद्यान से राजकुमारी गायब हो गई, जादू का घोड़ा भी गायब हो गया।]

अम्मार का दिल थम-सा गया। वह पागल-सा हो गया। चिल्लाता चिल्लाता चारों ओर भागने लगा। कुछ दौड़-धूप के बाद उसकी अक्ल फिर काम करने लगी।

उसे सन्देह हुआ कि राजकुमारी नहर कहीं घोड़े पर चढ़कर कहीं गई तो नहीं है। परन्तु वह तो जादू के घोड़े का भेद जानती नहीं। उसने बताया भी न था। फिर कहाँ गई?

श्री विमल चौधरी

"नहर घोड़ा नहीं ले गई होगी। सिद्द ही बदला लेने के लिए घोड़े और राजकुमारी को ले गया होगा।" राजकुमार अम्मार ने सोचा।

यह सन्देह होते ही उसने बाग के चौकीदारों को बुलाकर पूछा—"क्या इस बाग में कोई आया था? सच बताओ, नहीं तो तुम्हारी जान निकलवा दूँगा।"

चौकीदारों ने डरते हुए कहा—"महाराज! और तो कोई न आया था। सिद्द कोई जड़ी बूटी लेने आया था। वह वापिस बाहर नहीं गया है। वह कहीं बगीचे में ही होगा।"

अम्मार का भय ठीक निकला। सिद्द ने अपना बदला उतार लिया था। अपने दुख को काबू में करके उसने जलूस में आते हुए अपने पिता से जाकर यह बात कही।

"पिताजी, इन सैनिकों को लेकर घर जाइये। जबतक मैं इस धोखे का ठीक तरह पता न कर लूँगा, घर न आऊँगा।" उसने पिता से कहा। बादशाह के आँखों में आँसू छलक आये। इकलौते लड़के के इस तरह प्रतिज्ञा करने से उसे दुख हुआ।

"फाल्तू क्यों तंग होते हो! अगर तुम चले गये तो मैं क्या करूँगा! तुम अपने गुस्से और दुख को भूल जाओ और मेरे साथ घर आओ। अगर तुम चाहो तो दुनियाँ में किसी भी राजकुमारी से तुम्हारी शादी कर दूँगा। नहर के लिए इतना शोक न करो।" उसने अपने लड़के से कहा।

परन्तु ये बातें अम्मार के कानों में न घुसीं। उसने जल्दी जल्दी अपने पिता से विदा ली। घोड़े पर चढ़कर, बहुत तेज़ी से वह कहीं चला गया। बादशाह रोता धोता मूर्छित-सा घर वापिस गया। उसे जितना सन्तोष हुआ था, उतना ही दुख हुआ। निराशा भी।

उस दिन प्रातःकाल, जड़ी बूटी लेने के लिए फारस का सिद्ध उस बगीचे में घुसा। पर अन्दर आते ही उसे कस्तूरी आदि, की सुगन्ध आई। वह उस सुगन्ध की ओर जाता जाता उस मँडप की ओर गया। वहाँ उसने अपना जादू का घोड़ा देखा।

तुरत सिद्ध की जान में जान आ गई। जब से वह यह घोड़ा खो बैठा था तब से

उसको मानसिक शान्ति न थी। न उसने ठीक खाया-पिया ही था। उसने उसकी ठोक पीटकर जाँच पड़ताल की। सब कलें ठीक थीं। वह उसपर चढ़कर जाने को ही था कि उसको एक बात सूझी। राजकुमार इस घोड़े पर किसी और को भी लाया होगा। उसे मँडप में छोड़, उसके संरक्षण में ही यह घोड़ा रखकर वह गया होगा।

वह कौन था यह जानने के लिए ज्योंही सिद्ध ने मँडप में पैर रखा, त्योंही सूर्य की तरह चमचमाती शैय्या पर उसे राजकुमारी नज़र दिखाई दी। वह जान गया कि वह कोई मामूली स्त्री न थी। किसी बड़े घर की ही थी। उसे शान-सजावट के साथ जलूस में शहर ले जाने की सोचकर ही राजकुमार उसे यहाँ, शहर से बाहर उद्यान में छोड़ गया है। उसने राजकुमारी को पास जाकर सलाम किया।

राजकुमारी ने धीमे से आँख उठाकर सिद्ध की ओर देखा। उसका बदसूरत चेहरा देखते ही उसने आँखें मूंदकर पूछा—"तुम कौन हो?"

"महारानी! मैं राजकुमार का नौकर हूँ। मेरे मालिक ने आपको एक और मंडप में ले जाने के लिए कहा है। वह इससे कहीं अधिक अच्छा है। वह नगर के और समीप भी है। सच बात तो यह है कि बड़ी रानी की तबीयत अच्छी नहीं है। आपको लिवा ले जाने के लिए वे इतनी दूर नहीं आ सकतीं।" सिद्ध ने कहा।

"आखिर, तुम्हारे युवराजा हैं कहाँ?" राजकुमारी ने पूछा।

"वे बादशाह के साथ हैं। सब आ रहे हैं। वे आपको वाद्य-संगीत, बाजे गाजे के साथ ले जायेंगे।" सिद्ध ने कहा।

"सब ठीक है पर युवराज ने तुम जैसे बदसूरत आदमी को क्यों भेजा है?" राजकुमारी ने पूछा।

सिद्ध को यह बात बाण की तरह चुभी। पर उसने अपना रोष बाहर न प्रकट होने दिया। वह इतनी जोर से हँसा कि उसके मुरझाये हुए चेहरे पर बड़ी-बड़ी झुर्रियाँ पड़ गईं। उसने कहा—"महारानी! यह बात है! महल में मुझसे बदसूरत व्यक्ति कोई नहीं है। परन्तु मेरे शक्ति-सामर्थ्य के बारे में वे जानते हैं। आप भी जल्दी जान जायेंगी। तब आप भी मेरी प्रशंसा करेंगी। कितने ही खूबसूरत नौकर हैं पर युवराज ने उनको न भेजना चाहा। मुझे ही भेजा। अब आप समझ लीजिये।" उसने कहा।

इन बातों के कारण, राजकुमारी को उस बूढ़े पर विश्वास हो गया। उसने खड़े होकर पूछा—"मुझे किसपर सवार करके ले जाओगे?"

"यह लीजिये। जादू का घोड़ा जो तैयार है।" सिद्ध ने कहा।

"मुझे उसपर सवारी करनी नहीं आती।" उसने कहा।

"मुझे मालूम है। मेरे पीछे बैठिये।" कहता, सिद्ध घोड़े पर चढ़कर बैठ गया। राजकुमारी उसके पीछे चढ़कर बैठ गई। उसको कमर से बाँधकर, सिद्ध ने घोड़े की कल घुमाई। घोड़ा सीधा आकाश में उड़ा और थोड़ी देर में शहर आँखों से ओझल हो गया।

"तुम्हारे मालिक ने क्या कहा था? और तुम क्या कर रहे हो?" राजकुमारी ने बूढ़े से पूछा।

"मेरा मालिक!—मेरा मालिक कौन है?" सिद्ध ने पूछा।

"युवराजा" राजकुमारी ने कहा।

"किस देश का युवराजा! क्या तुम राजकुमार अम्मार के बारे में बातें कर रही हो! वह एकदम बावला है। भोंदू है।" सिद्ध ने कहा।

"अबे बुड्ढ! क्या अपने मालिक के बारे में इसी तरह बातें करते हैं!" राजकुमारी ने पूछा।

"उसे तुम मेरा मालिक बताती हो! क्या तुम जानती हो मैं कौन हूँ!" सिद्ध ने पूछा।

"जो तुमने कहा है सिवाय उसके मैं कुछ और नहीं जानती।" राजकुमारी ने कहा।

"वे सब तुझे और अम्मार को धोखा देने के लिए बोले गये झूठ हैं। मेहनत से बनाए हुए मेरे घोड़े को लेकर उसने मुझे बहुत तंग किया। अब उसे रोने दो। तुम धीरज रखो। मैं उस निखट्टू से तुझे लाख दर्जे अच्छा देखूँगा। तुझे अनगिनत कपड़े और जेवर दूँगा। हजारों दासियाँ दूँगा। तुझे ऐसे ऐश्वर्य और वैभव में रखूँगा जिस में राजा महाराजे भी नहीं रह सकते हैं।" सिद्ध ने कहा।

राजकुमारी रोने लगी। "अरे भगवान! यह मेरी क्या स्थिति है! पहिले तो माँ-

बाप से दूर हुई अब प्रियतम से भी दूर हो रही हूँ।"

सिद्ध घोड़े को रूम देश में ले गया। वह उसने उसे एक हरे मैदान में उतारा। वहाँ एक सुन्दर झरना बह रहा था। उस मैदान के पास ही एक नगर था। उसका परिपालक एक सुल्तान था। जब घोड़ा वहाँ उतरा तो वह सुल्तान वहाँ शिकार खेलने के लिए गया हुआ था। घोड़े से उतरते ही सुल्तान के सैनिकों ने सिद्ध को घेरकर पकड़ लिया। वे उसे, राजकुमारी और जादू के घोड़े को, सुल्तान के सामने ले गये।

सुल्तान, सिद्ध और राजकुमारी को देखकर अचरज में पड़ गया। उसे ऐसा लगा, जैसे एक ही नजर में उसने दुनियाँ के सबसे अधिक बदसूरत आदमी को और खूबसूरत स्त्री को देखा हो।

"क्यों, यह बूढ़ा तुम्हें कैसे ले आया है! यह तो इतना बदसूरत है कि दिन में देखो तो रात में सपने में दिखाई दे।" सुल्तान ने राजकुमारी से कहा।

"यह मेरी सम्बन्धी है। हम दोनों का विवाह हो गया है।" सिद्ध ने राजकुमारी के जवाब देने से पहिले ही सुल्तान से कहा।

अपने घर ले गया। उस घोड़े की विशेषता के बारे में सुल्तान कुछ न जानता था।

इस बीच राजकुमार अम्मार, घोड़े पर चढ़कर शहर शहर में अपनी प्रेयसी को खोज रहा था। वह नगरवासियों से पूछता जाता—"क्या आपने इस शहर में जादू का घोड़ा देखा है?" वह उसकी शक्ति के बारे में भी बताया करता।

जिस किसी ने भी यह प्रश्न सुना उसने उसका विश्वास न किया। उनको सन्देह भी हुआ कि उसकी अक्ल ठिकाने न थी। वह पागल था।

"यह सब झूट है। यह बुढ़ऊ कौन है, मैं नहीं जानती। यह कोई जादूगर है। मुझे धोखा देकर जबर्दस्ती लाया है।" राजकुमारी ने सच कह दिया।

यह सुनते ही रूम के सुल्तान ने सैनिकों को, बूढ़े को पीटने के लिए कहा। जब उन्होंने उसे खूब पीटा तो बूढ़े की मरने तक नौबत आ गई।

फिर सुल्तान सिद्ध, राजकुमारी और जादू के घोड़े को अपने साथ शहर ले गया। सिद्ध को एक काल कोठरी में बन्द करवा दिया। घोड़े और राजकुमारी को

अम्मार राजकुमार, इसतरह बहुत दिनों तक घूमता फिरता रहा। आखिर, सना नगर पहुँचकर, वहाँ के लोगों से भी उसने वही प्रश्न किया। सना नगरवासी न राजकुमारी का ठिकाना, न जादू के घोड़े का ठिकाना ही जानते थे। राजा और रानी, राजकुमारी के लिए दिन रात शोक कर रहे थे।

अम्मार वहाँ न ठहरा। वह आगे चला गया। थोड़े दिनों बाद वह एक और नगर में पहुँचा। जहाँ वह ठहरा हुआ था वहाँ कुछ व्यापारी भी ठहरने

आये। बातों बातों में उनमें से एक ने कहा—"अब की बार जब मैं रूम नगर पहुँचा वहाँ मैंने एक विचित्र बात सुनी। एक बार जब वहाँ का सुल्तान शिकार पर गया हुआ था तो वहाँ उसे संसार का सबसे अधिक बदसूरत आदमी और रम्भा-सी स्त्री दिखाई दी। और गजब की बात तो यह कि उनके साथ लकड़ी का घोड़ा भी था।" उसने सारी कहानी पूरी तरह सुनाई।

यह कहानी सुनकर अम्मार को लगा कि जिस चीज़ को वह ढूँढ रहा था, वह उसके पैरों के नीचे ही थी। उसने तुरत मालूम किया रूम नगर कहाँ था, कितनी दूर था। और वहाँ के लिए रवाना हो गया।

जब वह नगर में प्रवेश कर रहा था तो नगर के द्वारपालकों ने उसे सुल्तान के पूछताछ के लिए रोक दिया। सुल्तान परदेशियों से इसप्रकार पूछ-ताछ किया करता था। यह उस देश की परम्परा थी। परन्तु उस दिन इतनी देरी हो गई थी कि सुल्तान के दर्शन न किये जा सकते थे। सुल्तान को अगले दिन सवेरे ही

देखा जा सकता था। इसलिए वे अम्मार को रात भर कैद में रखने के लिए ले गये।

परन्तु उन्हें ही बुरा लगा कि वे एक निरपराधी को व्यर्थ कैद में रख रहे थे। उन्होंने उसको अपने साथ भोजन करने के लिए कहा। भोजन के बाद वे आपस में गप्पें मारने लगे।

बीच में एक द्वारपालक ने राजकुमार की ओर मुड़ कर पूछा—"तुम भाई किस देश से चले आ रहे हो?"

"मैं फारस का हूँ।" अम्मार ने कहा। यह सुन सब हँसे।

"तुम्हारे ही देश का एक और जेल में है! वह कितनी शेखी मारता है, मालूम है! उतना झूटा हमने कहीं नहीं देखा है। कहीं तुम भी तो वैसे ही नहीं हो? और तो और वह इतना बदसूरत है कि कुछ न पूछो।" एक ने कहा।

"उसने क्या झूट बोला है?" अम्मार ने पूछा।

"एक दो हों तो बतायें भी! कहता है कि वह सिद्ध है। वैद्यक भी जानता है। एक दिन जब हमारे राजा शिकार पर गये हुए थे तो उनको रास्ते में यह बुढ़ा और

अप्सरा जैसी एक स्त्री और एक अद्भुत लकड़ी का घोड़ा दिखाई दिये। उस लड़की की खूबसूरती तो देखते ही बनती है। हमारे सुल्तान ने उससे शादी करनी चाही। पर इतने में वह पागल हो गई। अगर यह बूढ़ा सचमुच वैद्यक जानता है तो उसका पागलपन क्यों नहीं ठीक करता! वह उसके बस की बात है क्या! सुल्तान ने बड़े-बड़े हकीमों से उसका इलाज करवाया। कितना ही रुपया खर्चा। परन्तु उसका पागलपन ठीक नहीं हो रहा है।"

"अबतक तो सब ठीक है। अब मुझे क्या करना चाहिये!" राजकुमार अम्मार मन ही मन सोचने लगा।

जब सोने का समय हुआ तो पहरेदार राजकुमार को एक कोठरी में बन्द करके सोने के लिए चले गये।

अम्मार को नींद न आई। काल कोठरी में बन्द सिद्ध, अपने आप अकेला फारसी में कुछ बड़बड़ा रहा था। अम्मार को उसका बड़-बड़ाना सुनाई दिया।

"मैं कितना अभागा हूँ। मेरी सब चालें फाल्तू निकलीं। देखते देखते चिड़िया हाथ से निकल गई।" वह बूढ़ा कह रहा था।

अम्मार ने फारसी में कहा—"क्या तुम अकेले ही अभागे हो? क्यों रोते हो!"

यह बात सुन सिद्ध सहसा चौकन्ना हो गया। खुश भी। वह यह न जानता था कि ये बातें अम्मार ने कही थीं। इसलिए उसने यह सब एक सिरे से सुनाया, कैसे उसने चालें चली थीं और कैसे वे व्यर्थ हो गई थीं। सवेरे होने तक वे दोनों इसी तरह बातें करते रहे।

(अगले अंक में समाप्त)

मुर्गी के दाम

एक ग्राम में बीरू नाम का एक कुम्हार रहा करता था। संक्रान्ति का त्योहार आया। उसकी पत्नी ने उसको एक मुर्गी खरीदकर लाने के लिए कहा। उस गाँव के एक बड़े किसान, नाहर के पास जाकर बीरू ने मुर्गी बेचने के लिए कहा।

नाहरने उसको एक मुर्गी देते हुए कहा— "अगर हाथ में पैसा न हो तो बाद में दे देना। हिसाब लिख रखूँगा।" इतनी मेहरबानी दिखानेवाला भी बीरू के लिए कोई न था। वह उसकी प्रशंसा करता घर चला गया।

उस दिन बीरू और उसकी पत्नी ने मुर्गी पकाकर खाई। थोड़े दिनों बाद बीरू, मुर्गी के दाम देने किसान के पास गया।

"अभी मुझे काम है। हिसाब देखने में बहुत देर लगेगी। बाद में दिखाई देना।" नाहर ने कहा।

"मुर्गी के दाम लेने के लिए हिसाब देखने की क्या ज़रूरत है? कितना देना है, बताइये, मैं देकर चला जाऊँगा।" बीरू ने कहा।

"अरे भाई, उसका काफ़ी बड़ा हिसाब है।" कहकर नाहर ने बीरू को भेज दिया।

जब बीरू, दो चार बार उससे मिलने आया, तब जाकर, नाहर ने घंटे भर, कागज़ कलम लेकर कोई हिसाब किताब किया। आखिर उसने कहा—"मुर्गी के हिसाब में, सब मिलाकर दो सौ पचास रुपये से कुछ अधिक होते हैं। अधिक की बात जाने दो, दो सौ पचास दे दो।"

अब बीरू को पता लगा कि उसने दो सौ पचास रुपये की मुर्गी खाई थी तो उसके मुख से थोड़ी देर तक बात न निकली।

"एक मुर्गी का दाम दो सौ पचास रुपये है! यहाँ तो कहीं सुना भी नहीं है! क्या वह कोई सोने की मुर्गी थी!" उसने नाहर से पूछा।

"हिसाब में कोई गल्ती नहीं है। जिससे चाहो तुम पूछकर देख लो। जो तूने मुर्गी ली थी, वह अब तक कितने अंडे देती! अंडों में से बच्चे निकलते! और ये बड़े होकर कितने अंडे देते! उन सब के दाम तुझे देने होंगे।" नाहर ने कहा। यह सुन बीरू का आश्चर्य दस गुना बढ़ गया।

"—मैं पटवारी से बात किये बगैर एक पाई भी न दूँगा। आखिर पता तो लगे कि बात क्या है!" बीरू ने कहा।

"अच्छी तरह पूछ, मैंने क्या मना किया है?" नाहर ने कहा। नाहर जानता था कि पटवारी उसकी तरफ़ ही फैसला करेगा।

दोनों मिलकर पटवारी के पास गये। नाहर ने पटवारी से कहा—"यह बीरू, दो साल पहिले, संक्रान्ति के त्यौहार पर मुझ से एक मुर्गी ले गया था। वह उसका दाम अब देना चाहता है। वह मुर्गी अब

तक कितने अंडे देती, उन अंडों के कितने बच्चे होते। उन बच्चों के कितने अंडे होते, उन सबका हिसाब लगाने पर दो सौ पचास रुपये निकलते हैं। यह रहा हिसाब। आप ही देखिये, उसमें कोई गल्ती हो तो बताइये। उसका पैसा मैं यूँहि क्यों लूँगा?"

पटवारी ने कोसते कुढ़ते, हिसाब ऊपर से नीचे तक देखा। उसने कहा—"अरे भाई, इस हिसाब में तो कोई गल्ती नहीं है।"

"मैंने तो तभी कहा था। बीरू को मुझपर विश्वास न हुआ। इसलिए ही आप तक आया है। बिचारा बेपढ़ा है, हिसाब किताब नहीं जानता है।" नाहर ने बीरू पर दया दिखाते हुए कहा।

बीरू हताश हो गया। वह पटवारी के घर से सीधे अपने घर जा रहा था कि रास्ते में उसको मुंशीजी मिले। उसने बीरू को देखकर कहा—"क्यों भाई, क्या हो गया, बड़े दुःख में मालूम होते हो।" बीरु ने जो कुछ गुजरा था उसे बताया।

"पटवारी ने तुमसे अन्याय किया है। जैसा मैं कहूँ, वैसा करना। नाहर से जाकर कहो कि कल गाँव के चौक में यह

बात तय कर ली जाये। मैं तेरी तरफ से गवाही दूँगा।" मुंशी ने कहा।

बीरू ने जाकर नाहर से ऐसा ही कहा।

"फिर चौक में तय करने की क्या बात है! पटवारीजी ने फैसला दे ही दिया है।" नाहर ने कहा।

"मुझे आप का हिसाब समझ में नहीं आया है। पटवारी का हिसाब भी समझ में नहीं आया है। चौक में दो-चार आदमी जो कहेंगे वही मैं करूँगा। मुंशी जी से तो आप डरते नहीं हैं!" बीरू ने कहा।

"मुझे क्या डर है।" नाहर ने कहा। वह चौक की पँचायत के बारे में मान गया।

अगले दिन शाम को सब चौक में जमा हुए। परन्तु कहीं मुंशी न दिखाई दिया। बीरू सोचने लगा कि मुंशी भी उसे दगा दे रहे थे। सब बीरू को देखकर हँस रहे थे कि अन्धेरा होने के बाद मुंशी आया।

"शायद मेरे आने में कुछ देरी हो गई है। और कोई बात नहीं, मजदूरों ने कहा कि आज ही धान बोना होगा। इसलिए मन भर धान तुरत छौंकने पड़े। वह काम करके आ रहा हूँ।" मुंशी ने कहा।

"बीज के धान को छौंकने की क्या जरूरत है मुंशी जी! क्या ऐसे बीज उगेंगे!" पटवारी ने मजाक करते हुए कहा।

"जब बीरू की खाई हुई मुर्गी अंडे दे सकती है तो क्या छौंके हुए बीज न उगेंगे!" मुंशी ने कहा।

सब जोर से हँसे। पटवारी का परिहास करने लगे। वह अन्धेरे में घर खिसक गया। फिर नाहर ने मुर्गी के दाम माँगने का नाम न लिया।

विचित्र बातें

१. गोपी की उम्र कितनी है? तीन वर्ष बाद गोपी की उम्र जितनी होगी, उसको तीन से गुणा करो। तीन साल पहिले की उम्र को भी उसी तरह तीन से गुणा करने पर....जो संख्यायें निकलेंगी उन दोनों में भेद ही गोपी की वर्तमान उम्र है। अब बताओ गोपी की उम्र कितनी है?

२. एक पिता और उसका लड़का था। आज पिता की आयु लड़के की आयु से दुगनी है। परन्तु १८ वर्ष पहिले पिता की आयु लड़के की आयु से तिगुनी थी। अब उनकी उम्र कितनी है?

३. एक रईस और उसके मित्र में धन के बारे में यों बातें हुईं। मित्र ने रईस से कहा—"मैं तीस दिन तक हर रोज तुम्हें एक लाख रुपये लाकर दूँगा। तुम मुझे पहिले दिन एक नया पैसा, दूसरे दिन दो नये पैसे, तीसरे दिन चार नये पैसे से गुणा करके देते जाओ।"

रईस ने हैरान होकर कहा—"नुकसान उठाओगे, समझे।"

मित्र ने बिना हिचकिचाये कहा—"नुकसान होगा तो होगा पर क्या तुम यह समझौता मानोगे?" रईस मान गया।

उस दिन से मित्र रईस को रोज एक लाख रुपये लाकर देने लगा। उसके बदले में पहिले दिन एक नया पैसा, दूसरे दिन दो नये पैसे, तीसरे दिन चार नये पैसे, पाँचवें दिन आठ नये पैसे, वह लेता गया। पाँच दिन तक उसने जो कुछ लिया था वह कुल मिलाकर एक रुपया नहीं हुआ था। और तब तक वह रईस को पाँच लाख दे चुका था। तीस दिन बाद किसको नुकसान हुआ? और कितना नुकसान हुआ?

(उत्तर अगले अंक में)

अरण्यवास

किसी ज़माने में काश्मीर देश का राजा जयसिंह था। उसके छोटे भाई शक्तिसिंह ने उसके विरुद्ध षड्यन्त्र किया और उसको जंगलों में भिजवा दिया। और वह स्वयं राजा हो गया। क्योंकि जयसिंह लोक प्रिय राजा था इसलिए उसके कई सामन्त अपने पद छोड़कर उसके साथ जंगल गये। यही कारण था कि जयसिंह यद्यपि जंगल में था तो भी उसके साथ बहुत से अनुयायी और नौकर-चाकर थे।

जयसिंह के लीलावती नाम की लड़की थी। शक्तिसिंह के भी मालती नाम की लड़की थी। क्योंकि उन दोनों की एक ही उम्र थी और चूँकि वह उसकी लड़की के साथ रह सकती थी, इसलिए शक्तिसिंह ने लीलावती को जंगल न भेजा। यद्यपि उनके पिता एक दूसरे के परम शत्रु थे तो भी उन दोनों में अनन्य मैत्री थी। जब लीलावती अपने पिता के बारे में दुःख प्रकट करती तो मालती भरसक उसका दुख हटाने की कोशिश करती।

एक दिन शक्तिसिंह के दरबार में मल्ल-युद्ध का आयोजन हुआ। उसको देखने के लिए लीलावती और मालती भी आये। उस दिन जिन मल्लों का युद्ध हो रहा था, उनमें एक दरबारी मल्ल था। वह इतना बलवान था कि लोग उसे दूसरा भीम कहते थे। उसके हाथों कई मल्ल मारे जा चुके थे। उस मल्ल से लड़ने के लिए जो आया था, वह एक बहुत साधारण युवक दीख पड़ता था।

उस युवक को देखते ही शक्तिसिंह ने मालती और लीलावती से कहा—"हमारा मल्ल इस युवक को एक क्षण में

मार देगा। इसको बुलाकर सलाह दो कि वह युद्ध न करे।"

उस युवक का नाम मकरांक था। सैनिक, उसको उस जगह ले गये जहाँ राजकुमारियाँ बैठी हुई थीं। छोटी उम्र और सौन्दर्य को देखकर राजकुमारियों को और भी दया आई। "हमारा मल्ल तुमसे बहुत बड़ा है। अधिक हट्टा-कट्टा है। मल्ल-युद्ध में उसे बहुत अनुभव है। उसने कई ऐसे लोगों को मार दिया है, जो तुमसे अधिक बलवान थे। इसलिए तुम उससे युद्ध न करो।" उन दोनों ने मकरांक को सलाह दी।

मालती से अधिक लीलावती ने उसे समझाया। फिर भी मकरांक ने उनकी बात न सुनी। "मैं कृतज्ञ हूँ कि आपने मेरा हित सोचकर मुझे यह सलाह दी। परन्तु मैं इस युद्ध में मरने तक के लिए तैयार हूँ क्योंकि मेरे मरने के बाद रोने-धोने के लिए न कोई मेरा मित्र है, न बन्धु-बान्धव ही।"

मल्ल-युद्ध शुरु हुआ। मकरांक बल में ज़रूर कम था, पर दाँव पेंच में कम न था। थोड़ी देर बाद, उसने उस पहाड़-से पहल्वान को हरा दिया। सबको आश्चर्य हुआ।

वह चिढ़-सा जाता। "अगर तू किसी और का लड़का होता तो मुझे और भी सन्तोष होता।" यह कहता शक्तिसिंह अपने आसन से उठकर चला गया।

क्योंकि वह युवक उसके पिता के मित्र का लड़का था इसलिए लीलावती और भी खुश हुई। मल्ल-युद्ध में इतनी होशियारी से जीतने पर भी राजा ने उसका समुचित आदर न किया था, मकरांक को यह बुरा भी लगा था। यह राजकुमारियों ने भी देख लिया था। उन्होंने जाते हुए, मकरांक के पास खड़े होकर उसकी खूब प्रशंसा की। फिर लीलावती ने अपने गले का हार उसे देते हुए कहा—"मुझे याद रखने के लिए आप इसे पहिनिये। इससे अधिक देने के लिए मेरे पास इस समय कुछ नहीं है। होता तो अवश्य बहुत कुछ देती।"

बाद में, लीलावती को मकरांक के विषय में प्रायः बातचीत करते देख मालती चिढ़ाया करती—"बहिन! लगता है, तुम उस युवक से प्रेम करती हो!"

"जब उसके पिता और मेरे पिता निकट मित्र थे तो क्या वह मेरा निकट मित्र नहीं है!" लीलावती पूछा करती।

शक्तिसिंह ने उसे बुलाकर पूछा—"बेटा! तुम्हारा नाम क्या है! तुम्हारे पिता कौन है!"

"महाराज! मेरा नाम मकरांक है। पिताजी का नाम गोपालदेव है।" मकरांक ने कहा।

गोपाल देव का नाम सुनते ही शक्तिसिंह का मुँह मुरझा-सा गया—क्योंकि वह यद्यपि कुछ दिन पहिले मर गया था, पर जब वह जीवित था तो वह जयसिंह के निकट मित्रों में से था। जब कभी जयसिंह के मित्रों के बारे में शक्तिसिंह सुनता तो

शक्तिसिंह न केवल मकरांक से ही चिढ़ा परन्तु लीलावती से भी झुँझलाने लगा। जयसिंह पर अब भी जनता को अभिमान था। वे मालती से अधिक लीलावती को चाहते थे। जब कभी लोग लीलावती को देखते तो सहसा उनको जयसिंह याद हो आता।

यह सब देख शक्तिसिंह ने एक दिन यकायक लीलावती से कहा—"तेरे लिये यहाँ जगह नहीं है। तू भी अपने पिता के साथ जंगल में रह।"

"यह क्या कर रहे हो पिताजी—अबतक मैं और लीलावती दो शरीर थे, और एक प्राण। अगर आपने उसको जंगल भेजा तो मैं एक क्षण भी न रह सकूँगी। अगर आप उसे पहिले ही, जब कि हम दोनों में मैत्री न हुई थी, भेज देते, तो मैं ऐसा अनुभव न करती। परन्तु इतने समय बाद हम दोनों को अलग करना अन्याय है।" मालती ने अपने पिता से कहा।

"तू निरी पगली है। वह लीलावती बड़ी चालाक है। वह भोला-भाला-सा चेहरा बनाये रखती है। कुछ कहती नहीं। इसलिए सब उसके बारे में ही बातचीत करते हैं। तुझे कोई नहीं पूछता-पाछता। तुम्हारा ओहदा क्या है और उसका क्या है? उसे जाने दो फिर देखना लोग तुम्हारी कितनी प्रशंसा करेंगे।" शक्तिसिंह ने कहा।

जब वह निश्चित रूप से जान गई कि पिता अपना निश्चय न बदलेंगे तो मालती भी, बिना किसी को बताये, लीलावती के साथ जंगल जाने के लिए तैयारियाँ करने लगी। लीलावती ने उसे रोकने की बहुत कोशिश की पर वह न मानी।

"हमारा मामूली कपड़ों में जाना खतरे से खाली नहीं है। अगर हम मामूली स्त्रियों की पोषाक में गईं तो हमें कोई नहीं पकड़ सकता।" मालती ने कहा।

"दोनों के स्त्री की पोषाक में जाने की अपेक्षा एक का आदमी का वेष पहिनकर जाना अच्छा है। मैं चूंकि तुम से बड़ी दिखाई देती हूँ इसलिए मैं आदमी का वेष पहिनूँगी। हम भाई बहिनके रूप में निकल पड़ेंगी।" लीलावती ने कहा।

लीलावती ने अपना नाम पुष्कर रख लिया। मालती ने अपना नाम लक्ष्मी रखा। वे जितना धन, बहुमूल्य कपड़े, गहने ले सकती थीं, उतना लेकर आधी रात के समय मोटे कपड़े पहिनकर, जंगल की ओर गईं। वे जयसिंह के पास पहुँचकर उनके साथ ही रहना चाहती थीं।

क्योंकि वे साथ पैसा लाई थीं इसलिए उनका रास्ता आराम से कट गया। परन्तु जंगल में पहुँचने पर उनको बहुत-सी कठिनाइयाँ हुईं। जंगल में वे बहुत दूर चली गईं। पर उन्हें जयसिंह का कहीं पता न लगा। उन्हें रास्ते में क्रूर जन्तुओं का भय था। दोनों ने खाना न

खाया था। रात में, सोने के लिए कहीं जगह न थी।"

मालती ने एक जगह कहा—"भूख के कारण मूर्छा-सी आ रही है। एक कदम भी आगे नहीं रख सकती।" दोनों रोने लगीं। वे सोच न पाती थीं कि क्या किया जाय। ठीक उसी समय भगवान की तरह कोई आदमी वहाँ आया।

"बाबू! यह मेरी बहिन है। भोजन नहीं खाया है, इसलिए मूर्छित-सी हो रही है। तुम हमें थोड़ा-सा खाने के लिए, और ठहरने के लिए जगह देकर पुण्य कमाओ।" आदमी का वेष धारण किये हुए लीलावती ने उस आदमी से कहा।

"हुज़ूर, पास ही मेरे मालिक, गड़रिये की झोंपड़ी है। वहाँ आइये। कल या परसों, मेरा मालिक उस झोंपड़ी को बेचकर जंगल से चला जाएगा। तबतक आप उस झोंपड़े में रह सकते हैं।" किसान ने कहा।

राजकुमारियों का इसमें भला ही था। वे गड़रिये की झोंपड़ी में जाकर, भूख मिटाकर, उस झोंपड़ी को खरीद कर स्वयं उसमें रहने लगीं। झोंपड़ी में कुछ सप्ताहों की रसद थी। उसको खाते हुए,

उन्होंने जयसिंह के ठिकाने के बारे में जानने की कोशिश की।

दिन बीत रहे थे। उन्हें जयसिंह का ठिकाना तो मालूम न हुआ। परन्तु जंगल में उन्होंने एक जगह देखा कि पेड़ों पर "लीलावती" का नाम खुदा हुआ है। लीलावती ने अनुमान किया कि यह मकारांक का ही काम था। वह भी किसी कारणवश उसी जंगल में था।

उसका अनुमान ठीक था। मकरांक को भी परिस्थितियों के अनुकूल न होने पर अरण्यवास करना पड़ रहा था।

मकरांक गोपालदेव का छोटा लड़का था। पिता की मृत्यु के समय वह बहुत छोटा था। इसलिए गोपालदेव ने मरने से पहिले अपने बड़े लड़के शशांक को मकरांक सौंपते हुए कहा—"बेटा! इसकी जिम्मेवारी तुम पर है। इसे आवश्यक शिक्षा दो। बड़ा करो। कामकाजी बनाओ। पूरी मदद दो।"

परन्तु शशांक ने अपने भाई के प्रति ठीक व्यवहार नहीं किया। मकरांक पढ़ा लिखा न था। चूँकि वह अपने पिता के समान था इसलिए विनयशील था और पढ़े लिखों से भी अधिक अक़्लमन्दी से काम करता था। उसको बढ़ता देख शशांक को जलन हुई। उसने जैसे भी हो उसका नाश करना चाहा। इसलिए उसने अपने अनुचरों द्वारा मकरांक को मल्ल-युद्ध करने के लिए प्रेरित किया। मकरांक जान गया कि उसका भाई उसकी मौत चाहता था। इसलिए वह जीवन से विरक्त हो गया और जानबूझकर मल्ल-युद्ध के लिए उद्यत हो गया।

पर उस मल्ल-युद्ध में मकरांक के जीत जाने से सबकी चालें ठप्प पड़ गईं। उसके

बाद शशांक ने उसके शयन कक्ष को जलाने की सोची।

सौभाग्य से उसकी यह चाल एक बूढ़े सेवक को मालूम हो गई। उसने मकरांक को आनेवाली आपत्ति के बारे में बताया और उसको अपने साथ बिना किसी को कहे जंगल ले गया। उन्हें भी जंगल में खाने पीने की बहुत कठिनाई हुई। बूढ़ा सेवक मूर्छित होकर गिर गया। उसे एक जगह छोड़कर मकरांक आगे जाकर उस जगह पहुँचा जहाँ जयसिंह और उसके आदमी ठहरे हुए थे।

जयसिंह और उसके अनुयायी भोजन के लिए बैठ रहे थे। मकरांक क्योंकि भूखा था इसलिए उसने तल्वार निकाल कर कहा—"उस भोजन को मत छुओ। वह मुझे चाहिए। अगर किसी ने मुझे बिना दिये कुछ खाया तो उसको मार दूँगा।"

जयसिंह ने स्नेहसे कहा—"क्यों बेटा, क्या इतने के लिए ही तल्वार निकालनी थी! भूखे हो तो आओ, हमारे साथ खाओ। बहुत-सा शिकार हमने मारा हुआ है। तुम्हें कोई नहीं रोकेगा।"
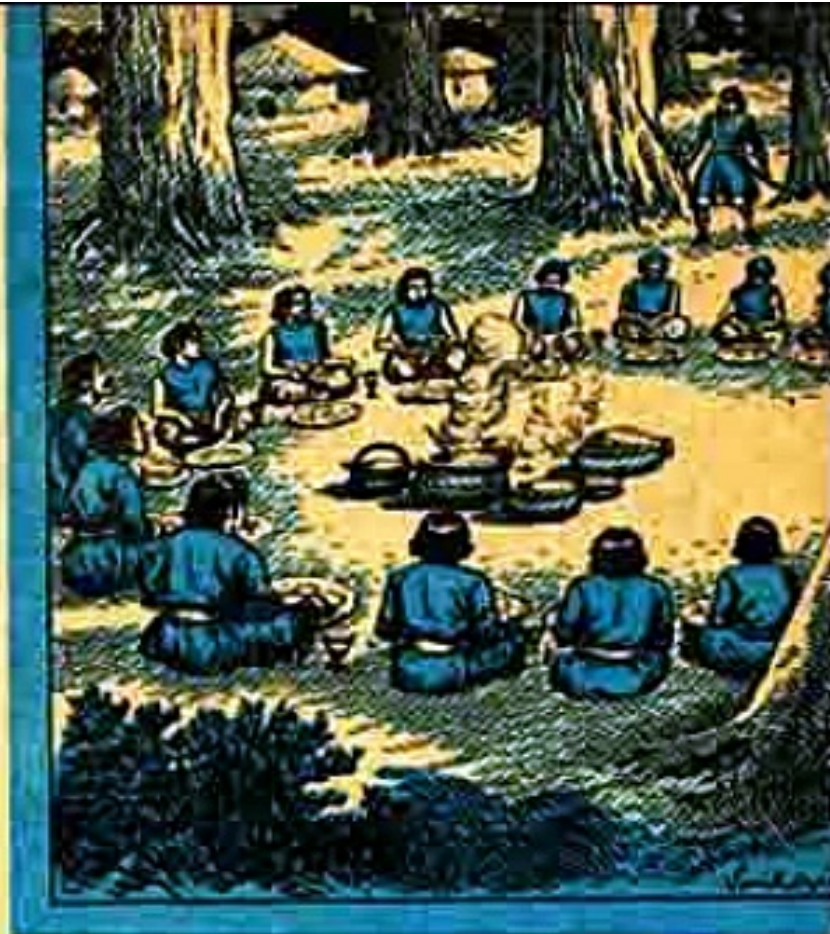
यह सुनते ही मकरांक अपनी धृष्टता पर शर्मिन्दा हुआ।—"आप मेरी जल्दबाजी को माफ कीजिए। मैंने कभी न सोचा था कि इस जंगल में किसी में इतनी सहृदयता भी होगी। अलावा इसके, भूख ने मुझे जानवर-सा बना दिया है। मुझ से भी एक बूढ़ा अधिक भूखा है। मैं उसे भी ले आता हूँ। जब तक वह न खालेगा तब तक मैं कुछ न छुऊँगा।" कहता वह उस जगह गया जहाँ उसका नौकर गिर गया था। उसे उठाकर ले आया। फिर सब ने मिलकर भोजन किया।

भोजन के बाद, जयसिंह ने मकरांक से सब सुना। यह जानकर कि वह उसके निकट मित्र का पुत्र था और उसकी तरह उसके भाई ने भी उसे धोखा दिया था उसने उसको अपने साथ रख लिया।

राजकुमारियों के गड़रिये की झोंपड़ी के खरीदने के कुछ दिनों बाद मकरांक जंगल में आया। पेड़ों पर "लीलावती" खुदा देखकर राजकुमारियों ने अनुमान कर ही लिया था कि वह यहीं कहीं था।

कुछ दिनों बाद, आदमी के वेष में, पुष्कर नाम रखे हुए लीलावती ने, जंगल में अकेला मकरांक को बैठे देखा। उसने उसके गले में अपना हार भी देखा। दोनों का परिचय होने के बाद, पुष्कर में, मकरांक ने अपनी प्रेयसी लीलावती के कुछ चिन्ह देखे। उसे आश्चर्य हुआ। परन्तु लीलावती जानबूझकर अपने वेष के मुताबिक गवांरू ढंग से बोल रही थी, इसलिए मकरांक के लिए उसको पहिचानना और भी मुश्किल हो गया।

"कोई लड़का "लीलावती" नाम खोदकर, यहाँ के पेड़ों को खराब कर रहा है।" लीलावती ने कहा।

मकरांक ने कहा कि वह उसी का काम था। "मैं लीलावती को भूल नहीं पा रहा हूँ। क्या करूँ, समझ में नहीं आता।"

"यह बात है तो तुम हमारी झोंपड़ी में आओ। वहाँ मैं और मेरी बहिन रहते हैं। मैं लीलावती की तरह रहूँगा। तू अपना प्रेम मेरे सामने व्यक्त करना। इस तरह तुझे थोड़ी सान्त्वना मिल सकेगी।" लीलावती ने कहा।

मकरांक ने वैसा ही किया परन्तु उस तरह उसे कोई सन्तोष नहीं हुआ। पर लीलावती बड़ी खुश हुई। क्योंकि वह जानती थी कि वे सब बातें वह उसी के बारे में कह रहा था। मालती भी यह नाटक देखकर बड़ी खुश हुई।

राजकुमारियों को मकरांक द्वारा मालूम हुआ कि लीलावती का पिता जयसिंह वहाँ ठहरा हुआ था। एक दिन लीलावती अपने बदले हुए वेष में उसे देखने गई। दोनों में बातचीत हुई।

"क्यों भाई, तुम्हारे माँ-बाप कौन हैं?" जयसिंह ने पूछा।

"मैं एक बड़े वंश में पैदा हुआ हूँ।" लीलावती ने उत्तर दिया। वह अपना भेद बाहर किये ही घर वापिस चली आई।

एक बार जंगल में से मकरांक गड़रिये की झोंपड़ी की ओर जा रहा था, उसको झाड़ियों के बीच में एक आदमी सोता हुआ दिखाई दिया। उस आदमी पर एक साँप रेंग रहा था। वह मकरांक को देखते ही झाड़ियों में भाग गया। उसकी ओर वह देख ही रहा था कि वहाँ उसको शेरनी दिखाई दी। वह झाड़ियों की आड़ में से सोये हुए आदमी की ओर निरन्तर देख रही थी। वह इस ताक में थी कि वह आदमी हिले और वह उसपर हमला करे क्योंकि शेर निश्चल प्राणी या मुर्दों को नहीं छूते।

साँप से बाल बाल बच जाने के बाद, शेरनी के हाथ में पड़नेवाला यह व्यक्ति कौन था, मकरांक ने जानना चाहा। और पास जाकर देखा तो वह व्यक्ति उसका भाई शशांक ही निकला। मकरांक ने एक क्षण सोचा "अच्छा है। वह आदमी, जो मुझे जीते जी, शयन-कक्ष में जला देना चाहता था शेरनी के हाथ मारा जाये।" परन्तु तुरत उसे ध्यान आया कि उसको अपने भाई की रक्षा करनी चाहिये। वह तलवार निकालकर शेरनी पर कूदा। उसको उसने मार दिया। परन्तु इस बीच शेर ने पँजा खोलकर जोर से उसका हाथ खींचा।

इस शोर-शराबे में शशांक नीचे से उठा। उसने देखा कि उसका भाई उसके प्राणों की रक्षा कर रहा था। वह बड़ा शर्मिन्दा हुआ। शेर के मरने के बाद, उसने भाई का आलिंगन करके कहा— "मैंने तुझे मारना चाहा पर तुमने मेरी रक्षा की। मुझे माफ़ करो भैय्या।"

मकरांक का बहुत-सा खून बह गया था। वह निश्शक्त-सा हो गया था।—"भाई, इस रास्ते पर जाने से एक झोपड़ी आयेगी। वहाँ पुष्कर नाम का एक किसान लड़का है। वह मेरा मित्र है। वह चूँकि ऐसा रहता है, जैसे वह मेरी प्रेयसी लीलावती हो, उससे जाकर मेरी बात कहना।"

शशांक ने जाकर झोपड़ी में पुष्कर और लक्ष्मी से कहा कि मकरांक घायल हो गया था। शशांक ने यह भी बताया कि वह मकरांक का भाई था, कभी उसने उसको मारना चाहा था। उसी के कारण वह जंगल में रह रहा था। अब वह समझ गया था। उसका दिल बदल गया था। आदि।

शशांक का पश्चाताप देख मालती मक्खन की तरह पिघल गई। उसने उसके दुःख को देखकर उसके प्रति सहानुभति प्रकट की। उसी समय उन दोनों में यकायक प्रेम हो गया।

उसी सिलसिले में एक और विचित्र बात हुई। यह सुनते ही कि मकरांक को शेर ने घायल कर दिया है, लीलावती मूर्छित हो गई। होश आने के बाद उसने अपनी कमजोरी को छुपाते हुए शशांक से कहा—"मैं मकरांक की प्रेयसी का अभिनय किया करता था। इसलिए यह खबर पाते ही मैंने आज ऐसा अभिनय किया जैसे मूर्छित हो गया हूँ।" परन्तु कुम्हलाये हुए पुष्कर का मुँह देखकर, शशांक को यह सब अभिनय-सा नहीं लगा।

वह फिर अपने भाई के पास गया। उसने उसको सब बातें बताईं। यह भी बताया कि पुष्कर कैसे मूर्छित हो गया था।

शशांक के चले आने के बाद, मकरांक ने लीलावती से कहा कि उसका भाई लक्ष्मी से प्रेम कर रहा था और उसके साथ विवाह करने के लिए तैयार था। "यदि इस विवाह के साथ मेरा और लीलावती का भी विवाह हो सकता तो कितना अच्छा होता" उसने कहा।

"अगर तुझे सचमुच लीलावती पर इतना प्रेम है तो मैं उसे कल सवेरे तक यहाँ ला सकता हूँ। यही नहीं, मैं उसको, तुमसे विवाह करने के लिए भी मना सकता हूँ। मैं थोड़ा बहुत जादू जानता हूँ।" लीलावती ने कहा।

मकरांक को यदि खुशी हुई तो उसे निराशा भी हुई। "यह हँसी मजाक का समय नहीं है। सच बताओ।" उसने कहा।

"इसमें हँसी मजाक कुछ नहीं है। मैं हमेशा सच ही कहता हूँ। तुम अच्छे कपड़े पहिन कर दुल्हा बनो। चाहो तो, जयसिंह आदि से भी कह देना। यह मेरा जिम्मा रहा कि कल सवेरे लीलावती यहाँ हाजिर रहे।" लीलावती ने कहा।

अगले दिन सवेरे, जयसिंह के समक्ष दोनों विवाहों को सम्पन्न करने की व्यवस्था

"वह लड़की लक्ष्मी है न—न मालूम मैं उससे कितना प्रेम करता हूँ। मैं उससे विवाह करके उसी झोंपड़ी में रहना चाहता हूँ। तुम अपने गाँव जाकर सारी सम्पत्ति स्वाधीन कर लो और आराम से रहो। मुझे उस सब की कोई जरूरत नहीं है।"

"तो कल ही शादी कर लेना। देखो, पुष्कर आ रहा है। वह लक्ष्मी अकेली होगी। तुम जाकर उसको शादी के लिए मनाओ। जयसिंह के समक्ष विवाह होगा।" मकरांक ने कहा।

हुई। लक्ष्मी, शशांक, मकरांक उसके ठहरने की जगह गये।

जयसिंह के आदमियों को एक ही दुल्हिन देखकर आश्चर्य हुआ। मकरांक ने बताया कि पुष्कर लीलावती को ला रहा था। होनेवाली दुल्हिन उसकी लड़की ही थी, यह जानकर जयसिंह को बड़ी खुशी हुई।

"पुष्कर ने तेरा परिहास करने के लिए ऐसा कहा होगा। मेरी लड़की को यहाँ लाना उसके बस की बात नहीं है।" जयसिंह ने मकरांक से कहा।

इतने में पुष्कर ने वहाँ आकर जयसिंह से पूछा—"अगर मैं आपकी लड़की को ले आऊँ तो क्या आप उसे मकरांक से विवाह करने की अनुमति देंगे?"

"जरूर! अनुमति दूँगा। अगर मेरे पास राज्य होता तो राज्य भी दहेज में दे देता। जयसिंह ने कहा।

"क्या तुम उससे शादी करोगे?" पुष्कर ने मकरांक से पूछा।

"चाहे वह कितने ही राज्यों की साम्राज्ञी हो, मैं इच्छापूर्वक उससे विवाह करूँगा।" मकरांक ने कहा।

फिर लक्ष्मी और पुष्कर मिलकर अपने झोंपड़े में गये। लीलावती ने अपना आदमी का वेष निकाल दिया। दोनों ने अपने असली कपड़े पहिने। गहने लगाये। वे राजकुमारियों की तरह तैयार हो गईं। वे फिर जयसिंह के पास गईं। लीलावती ने अपने पिता को प्रणाम करके अशीर्वाद देने के लिए कहा। उसने पिता को अरण्यवास की कहानी भी सुनाई।

लीलावती और मकरांक, मालती और शशांक की शादी हुई। वे शादियाँ यदि शहर में होतीं तो बड़े धूम-धाम से होतीं।

पर उस जंगल में भी आनन्द की कोई कमी न थी। विवाह के बाद, जब सब मिलकर भोजन कर रहे थे तो शक्तिसिंह कुछ सैनिकों के साथ वहाँ आया।

जब से उसकी लड़की मालती गायब हो गई थी तब से शक्तिसिंह आगबबूला हो रहा था। उसे यह जानकर और भी गुस्सा आया कि उसकी लड़की, बेघरबार अवारे, उसके भाई के पास जंगल में गई थी। जयसिंह और उसके आदमियों को मारने के लिए वह कुछ सैनिकों को लेकर वहाँ आया था।

परन्तु, नये दुल्हे, दुल्हिन, सहभोज करते हुए उन लोगों को देखकर शक्तिसिंह का इरादा बदल गया। उसको अक्ल आ गई। जंगल में भी आनन्द की कमी नहीं है। किरीट के होने पर ही कोई राजा नहीं होता है। भाई जयसिंह जहाँ है, वहीं राजा है—ये सब बातें शक्तिसिंह को यकायक स्पष्ट हुईं। वह भाई के पैरों पर गिर पड़ा। उससे उसने माफ़ी माँगी। "जो कुछ हुआ, सो हुआ। जिस राज्य में तू नहीं है, वह अरण्य-सा ही है, और जिस अरण्य में तू है, वह राज्य-सा है। इसलिए तुम जाकर अपने राज्य को पहिले की तरह देखो। सुख से रहो।" उसने कहा।

यह सुन सब बड़े खुश हुए। जयसिंह का अरण्यवास समाप्त हुआ। अपने अपने पदों, राज्यों को छोड़कर जो जो सामन्त उसके साथ आये थे उन सब के प्रति उसने आदरपूर्ण व्यवहार किया। सब अपने अपने राज्य वापिस जाकर आराम से रहने लगे।

[१५]

[धीरमति ने घर वापिस आकर माँ को सब बातें तो बताईं, पर पिता के बारे में कुछ न कहा। उस दिन, उसके साथ पैलास से आया हुआ ज्ञानी, उसके घर अतिथि होकर आया। उस अतिथि के भोजन करने के बाद रूपधर के घर धरना दिये हुए दुष्ट, हॉल में भोजन करने लगे। उसी समय रूपधर, बूढ़े भिखारी के रूप में वहाँ आया। धीरमति के दिये हुए भोजन को उसने खाया। वह औरों से भी माँगने लगा।]

रूपधर के घर में बैठे खानेवाले उन दुष्टों को, उस बूढ़े को देखकर बड़ी दया आई। जिस जिसने जितना चाहा उतना उसको दिया। "यह बूढ़ा कौन है? यह कहाँ से आया है?" कई ने आश्चर्य से आपस में पूछा।

वहाँ खड़े बकरियों को चरानेवाले काल ने कहा—"मैंने इस बूढ़े को यहाँ आते समय, पहिले रास्ते में देखा था। सूअरों का रखवाला इसे अपने साथ लाया है।"

यह सुन, दुर्बुद्धि ने सूअरों के रखवाले की ओर मुड़कर पूछा—"अरे, यह तुझे क्या हो गया है? क्या इस शहर में अवारे, भिखारी कम हैं जो इसे बूढ़े खूँसट को भी साथ ले आये? क्या तुम्हारे मालकिन का नमक खाने के लिए भिखारियों की ही कमी है?"

[एक ग्रीक पुराण कथा]

करना सीख जाते हैं।" उसने दुर्बुद्धि की ओर मुड़कर कहा—"हममें ताकत है, इसलिए तुम इस बूढ़े को बाहर धकेलने के लिए कहते हो! यही तुम्हारी सलाह है! कभी भी वह न होगा। दान करो। पर जितना तुम्हें खाने में मजा आता है, उतना परोसने में नहीं आता।"

"अरे अरे, बहुत बड़ा व्याख्यान दे डाला है। जो मैं इसे दूँगा, बाकी सब भी वही दें तो वह इस मकान की छाया के पास भी न आयेगा।" कहते हुए दुर्बुद्धि ने झुक कर अपने पैरों के नीचे की चौकी उठाई।

"बाबू! आप बड़े हो सकते हैं। परन्तु नौकरों के बारे में आप बहुत सख्ती बरतते हैं। क्या कोई जानबूझकर किसी भिखारी को साथ लाता है!—फिर भी मुझे आप लोगों से क्या काम है! मेरे लिए यह काफी है कि मालकिन और छोटे मालिक की मेहरबानी मुझपर बनी रहे।" सूअरों के रखवाले ने कहा।

श्रीरमती ने सूअरों के रखवाले से कहा—"क्यों फाल्तू की यह बातचीत! उसके बात करने का तरीका ही यही है। उसे देखकर और भी कड़वे ढँग से बात

इस बीच रूपधर, सबके पास से कुछ न कुछ लेकर झोले में डालकर दुर्बुद्धि के पास गया। "बाबू! आप इन सब में बड़े मालूम होते हैं। इसलिए आप को सबसे अधिक देना होगा। कभी मैंने भी अच्छी जिन्दगी देखी थी। परन्तु देवताओं को मुझ पर गुस्सा आया और उन्होंने मुझे समुद्र में डाका डालने के लिए भेजा। मिश्र में मेरे सब साथी मारे गये। मैं अब मारा मारा द्वीप द्वीप के चक्कर लगा रहा हूँ।" उसने कहा।

"यह क्या बला है! अरे खाना तो खाने दो। दूर खड़े हो, भिखारी हो पर तुम्हें इतना घमंड! जरा सम्भल कर रहना। वरना हम तुझे फिर भिक्ष भेज सकते हैं। ये सब देंगे नहीं तो क्या करेंगे! उनकी चीज़ तो है नहीं!" दुर्बुद्धि ने ज़ोर से कहा।

"बाबू, आप देखने में तो बड़े लगते हैं। पर आपकी अक्ल छोटी मालूम होती है। जब आपकी चीज़ नहीं है तभी नहीं दे पा रहे हैं, अपनी चीज़ होगी तो रो पीट कर नमक पानी भी न देंगे। यहां इतना सब कुछ खाने को है, क्या आप रोटी का टुकड़ा भी नहीं दे सकते!" कहता हुआ रूपधर वहाँ से हटा।

"ओ....क्या कहा?" दुर्बुद्धि ने चौकी रूपधर की ओर फेंकी। वह रूपधर के कन्धे पर लगी।

परन्तु उस चोट से रूपधर घबराया नहीं। उसने एक बार सिर मोड़कर गुस्से से दुर्बुद्धि की ओर देखा। फिर अपनी जगह पर जाकर बैठ गया। तब उसने यों कहा—"इस घर की मालकिन से शादी करने की इच्छा रखनेवालो! मेरी बात जरा सुनो। अपनी चीज़ को सुरक्षित रखने के लिए अगर किसी को चोट लगती है, तो इस में कोई बड़ी बात नहीं है। परन्तु एक ऐसे व्यक्ति के लिए जो पेट के लिए दर दर भटक रहा हो, चोट खाना बुरा है। अगर भिखारियों की मदद करनेवाला कोई भगवान है तो इस दुर्बुद्धि का भला होना तो अलग, बुरा ही बुरा होगा।"

"मुख बन्द करके खाते हो तो खाओ, नहीं तो बाहर जाओ। अगर इस तरह तूने बकवास की तो सब मिलकर तेरी खबर लेंगे। सम्भल कर रहो।" दुर्बुद्धि ने कहा।

उस बूढ़े भिखारी के प्रति, दुर्बुद्धि का इस प्रकार का क्रूर व्यवहार औरों को भी न जँचा। "इस बूढ़े को पीटा क्यों?" "हो सकता है इन भिखारियों का भी कोई भगवान हो! कभी कभी देवता ही इस रूप में आते हैं।" हर किसी ने अपनी अपनी कही। पर दुर्बुद्धि ने सब कुछ अनसुना कर दिया।

पिता के चोट खाने पर धीरमति खौल रहा था। वह अपने दुख और क्रोध को मुश्किल से काबू कर पा रहा था

हॉल में जो कुछ हुआ था, उसके बारे में पद्ममुखी और उसकी परिचारिकाओं को भी मालूम हुआ। पद्ममुखीने सूअरों के रखवाले को बुलवाकर कहा—"क्या उस भिखारी को यहाँ बुलाकर लाओगे? सुना है वह बहुत देशों में घूमा है। वह शायद मेरे पति के बारे में कुछ बता सकेगा।"

सूअरों के रखवाले ने रूपधर के पास जाकर कहा—"मालकिन, तुम्हें एक बार बुला रही हैं। अगर मालिक के बारे में तुम्हें कुछ मालूम हो तो वह सुनना चाहती है। जाओ।"

"मैं तुम्हारे मालिक के बारे में बहुत कुछ जानता हूँ। पर वह सब बताने का यह समय नहीं है। अन्धेरा होने के बाद, जब कोई न होगा, तब बताने आऊँगा। यह उनसे कह देना।" रूपधर ने उससे कहा।

सूअरों के रखवाले ने यह आकर पद्ममुखी से कहा। फिर उसने धीरमति से कहा—"छोटे मालिक! अब मुझे जाकर अपने सूअरों को देखना होगा। उस बूढ़े की जरा होशियारी से देखभाल कीजिये। देखा न उसको दुर्बुद्धि ने कितनी बड़ी चोट मारी है!"

"बूढ़े की तुम फिक्र न करो। तुम खाना खाकर जाओ।" धीरमति ने कहा।

जब सूअरों का रखवाला खाना खाकर निकला तो दुपहर ढल चुकी थी। वे नाचने गाने में मनोरंजन कर रहे थे। उसी समय एक और भिखारी वहाँ आया। वह नगर में हमेशा भीख मांगा करता। वह क्योंकि हर किसी के पास उसके मतलब की खबर पहुँचाया करता था इसलिए लोग उसे "दूत" कहते थे।

उस "दूत" ने अन्दर आते ही, रूपधर को देखकर पूछा—"क्यों बूढ़े! तुम कौन हो! बाहर जाते हो कि नहीं! नहीं तो बाहर फेंकता हूँ!"

"मैंने तुझे क्या कहा है! तुम मेरे पीछे क्यों पड़े हो! हाँ, अगर बाहर फेंकने की ही बात उठी तो मैं बूढ़ा होने पर भी तुम्हें बाहर फेंक सकता हूँ।" रूपधर ने कहा।

"अरे, क्या घमंड है! खड़ा हो। देखें, कौन अधिक बलवान है—बूढ़े हो और मुझ जैसे जवान से कलई मिलाना चाहते हो!" दूत ने कहा।

दोनों भिखारियों को कुत्तों की तरह लड़ता देखकर दुर्बुद्धि बड़ा खुश हुआ। "दोस्तो! देखें इन दोनों में कौन जीतता

है! इनका झगड़ा हमारे लिये एक तरह का नया मनोरंजन है।" उसने कहा।

सब आकर भिखारियों को घेरकर खड़े हो गये। "तुम दोनों में जो जीतेगा वह रात तक यहीं रह सकता है, और छक कर खा सकता है। जो हारेगा उसे हम यहाँ न रहने देंगे।" दुर्बुद्धि ने भिखारियों से कहा।

"बाबुओ! मैं बूढ़ा हूँ—और जवान से लड़ना है। आप सब वचन दीजिए कि आप छुपे छुपे मुझपर वार न करेंगे और इसकी सहायता न करेंगे। उस हालत में

मैं जी तोड़ इससे लड़ूँगा।" रूपधर ने कहा।

सबने शपथ की कि वे बीच में किसी की तरफदारी न करेंगे। फिर धीरमति ने रूपधर से कहा—"इस घर का बड़ा मैं हूँ। और भी बड़े लोग हैं। हम अन्याय नहीं होने देंगे।"

रूपधर ने अपने चीथड़ों को पैरों और हाथों पर बाँधा। उसके ताकतवर जाँघों और पैरों को देखकर सबको अचरज हुआ। "आज हमारे दूत का यम के दूत से सामना पड़ा है।" उन लोगों ने मन ही मन सोचा।

दूत की हालत बुरी हो रही थी। वह भय से काँप रहा था। नौकरों को उसे कपड़े पहिनाने पड़े। रूपधर से लड़ने के लिए उसे जबर्दस्ती धकेलना पड़ा। रूपधर सोच रहा था कि दूत को एक ही चोट में यम के पास पहुँचाया जाय या मामूली चोट से ही गिराया जाय। अगर उसने एक ही चोट में उसका खातमा कर दिया तो उन दुष्टों को उस पर शक हो सकता था। इसलिए उसने मामूली चोट करने का निश्चय किया।

जब दोनों योद्धा आमने सामने खड़े हुए तो दूत ने रूपधर के कंधे पर वार करना चाहा—पर रूपधर ने जब उसके गले पर एक चोट मारी तो उसकी हड्डी टूट गई। वह खून की कै करता नीचे गिर गया और पैर उठाकर छटपटाने लगा। दर्शक हाथ ऊपर उठाकर हँसे।

रूपधर दूत को, पैर पकड़कर बाहर घसीट ले गया। उसको दीवार के सहारे बिठाकर, उसके हाथ में एक लकड़ी देकर उसने कहा—"कुत्तों, सूअरों को अंदर न आने देना। तुम समझना कि सब भिखारियों के तुम ही राजा हो।—

बस काफी है, आज आसानी से छूट गये।" फिर वह लौटकर पहिले की जगह बैठ गया।

शाम को पद्ममुखी हॉल में आई। वह वहाँ कभी न आती थी। उसका सौन्दर्य देखकर सब तन्मय से हो गये। उसने अपने लड़के से कहा।—"धीरमति! क्यों बेटा, तुम ऐसे कैसे होते जा रहे हो! कोई विचारा हमारे पास आया है—तुमने उस पर किसी को क्यों हाथ उठाने दिया! उसे अगर चोट-चाट लग जाती तो उसमें हमारी ही तो बदनामी है।"

"माँ! तुम्हें गुस्सा आ जाना सहज है। ये सब मुझे इसतरह घेरे रहते हैं कि मैं कुछ सोच नहीं पाता हूँ। मैं क्या करूँ! फिर भी इस बुढ़े ने, उस दूत की, जिसने उसपर हाथ उठाया था, बुरी गत बना दी।"

दूर से विपुलयोद्धा ने कहा—"पद्ममुखी, अगर तेरे सौन्दर्य को देश की जनता ने देखा तो सब के सब तेरे घर ही रहने लगेंगे। सब तुमसे शादी करना चाहेंगे। सचमुच तुम इस देश की स्त्रियों की शिरोमणि हो।"

"मेरा सौन्दर्य तो उसी दिन चला गया था जिस दिन मेरे पति चले गये थे। यह बात सच है कि उन्होंने जाते समय कहा था कि अगर वे मर जायें तो मैं दूसरी शादी कर लूँ। पर मैंने यह कभी न सोचा था कि मेरा स्वयंवर इतना अपमान जनक होगा। क्या पहिले कभी ऐसा हुआ है! वर-वधू के लिए आभूषण, पशु, आदि भेंट में लाते हैं,—पर यह नहीं होता कि वधू के घर धरना देकर वे उसके घर की चीजें खायें, बरबाद करें।" पद्ममुखी ने कहा।

उसका दुर्बुद्धि ने यों जवाब दिया।

"तुम्हारी बात ठीक है पद्ममुखी। ये सब, जो कुछ तुम चाहो, लाकर दे सकते हैं। पर हम में से एक को जबतक तुम अपना पति नहीं मानते तबतक हम यहाँ से नहीं हटेंगे।"

फिर सबने अपने आदमियों को भेजकर हजारों उपहार मँगाकर उसको दिये। उन सबको दासियों द्वारा पद्ममुखी ने अपने कमरे में भिजवाया। वह स्वयं भी चली गई।

अन्धेरा होते ही हॉल में तीन जगह होम किया गया। बत्तियाँ जलाई गईं। रोशनी की गई।

बहुत देर तक, कई ने पी-पाकर होहल्ला किया। विपुल्योद्धा ने रूपधर से कहा कि वह उसे नौकरी देगा।—"परन्तु तुम बहुत काम चोर मालूम होते हो। मेहनत करनेवाले नहीं मालूम होते।" उसने कहा।

"खेत में हल चलाने में, कुल्हाड़ी से लकड़ी काटने में, हम दोनों में कौन अच्छा है, मालूम करें। बाजी लग जाय। तुम निरे आलसी हो। जब रूपधर वापिस आ जायेगा....तब तुम्हारी पोल खुलेगी।" रूपधर ने कहा।

विपुल्योद्धा को गुस्सा आया। उसने उसपर एक चौकी मारी। वह बच गया। वह किसी और को लगी। वह चिल्लाया। सब एक साथ शोर करने लगे।

धीरमति ने रौब से पूछा—"यह क्या शोर मचा रखा है! तुम पी-पाकर पागलों की तरह चिल्ला रहे हो। यह अच्छा नहीं है। खा लिया है, पीलिया है। अब जाकर सोओ।"

सब उठकर चले गये। उस हॉल में केवल रूपधर और धीरमति ही रह गये।

(अभी और है)

राजद्रोही का बलिदान

विक्रमार्क तो हार मानना जानता न था। वह पेड़ के पास जाकर, शव उतारकर कन्धे पर डाल पहिले की तरह चुपचाप, श्मशान की ओर चलने लगा। तब शव में स्थित बेताल ने कहा :—

"राजा, तुम्हारी बलिदान की प्रवृत्ति सचमुच प्रशंसनीय है। पर तुम से भी बड़े बड़े बलिदान करनेवाले हैं, जो अपने प्राण तक देने को तैयार हैं। मैं गुणभूषण की विचित्र कथा सुनाता हूँ। सुनो।" उसने यह कहानी सुनानी शुरु की।

कभी काशी राजा की नौकरी में गुणभूषण नाम का एक युवक रहा करता था। उसके बारे में यह कहा जाता था कि मगध में उसके पिता बड़े करोड़पति थे और वह पिता से लड़कर आया था, इसीलिए

ही वह छोटे ओहदे पर काम कर रहा था। वह बहुत मितभाषी था। व्यर्थ बातें न करता। ऐरे गैरे से दोस्ती भी न करता। इसलिए उसकी सच्ची कहानी क्या थी, कोई न जानता था।

काशी नगर में कई मगधवासी थे, जो वहाँ व्यापार आदि, किया करते थे। गुणभूषण की उनसे मैत्री थी।

इतने में यह मालूम हुआ कि राजा के विरुद्ध कोई षड्यन्त्र चल रहा था। यह भी पता लगा कि षड्यन्त्रकारियों में मगधवासी अधिक थे। उन सब को सैनिकों ने पकड़कर कैद में डाल दिया। औरों के साथ गुणभूषण भी कैद में डाल दिया गया। फिर उनकी सुनवाई हुई। कई को फाँसी लगा दी गई।

गुणभूषण और दो तीन आदमियों का इसमें कोई हिस्सा था, यह सिद्ध न किया जा सका। उनके विरुद्ध कोई गवाही भी न थी। फिर भी मन्त्री ने उनको थोड़े दिन और कैद में रखने के लिए कहा। मन्त्री का ख्याल था कि अगर वे भी षड्यन्त्र में शामिल थे तो यह बात उनको कैद में रखने से मालूम की जा सकती थी।

काशी देश के मन्त्री का नाम कैलासनाथ था। उसकी उम्र चालीस थी। उसकी पत्नी मर चुकी थी। फिर उसने शादी न की। वह राज्य-कार्य में ही अपनी सारी शक्ति लगा रहा था। वह बहुत अक़्लमन्द था। कैद में डाले गये राजद्रोहियों से रहस्य जानने के लिए उसने व्यवस्था की। वह सैनिकों द्वारा यह मालूम किया करता था कि कौन कैदी कैसे रह रहा था।

गुणभूषण के व्यवहार ने उसको आश्चर्य में डाल रखा था। वह कैद में था, फिर

भी उसके ठाट-बाट कुछ भी कम न हुए थे। वह किसी से बातें न करता। व्यर्थ प्रश्नों का उत्तर न देता। वह जेल के कर्मचारियों से इस प्रकार व्यवहार करता जैसे वह कोई बड़ा अधिकारी हो। हमेशा किसी शोक में डूबा रहता।

वह अपनी प्रेयसी माधवी में बारे में चिन्तित था। उन दोनों का एक ही गाँव था। उसी के कारण उसे मगध देश छोड़ना पड़ा था और काशी में आजीविका करनी पड़ी थी। यह यों हुआ—

गुणभूषण के पिता की तरह माधवी का पिता भी बहुत धनी था। उसके भी सिवाय उस लड़की के कोई और सन्तान न थी। उसके यकायक मर जाने के कारण सम्बन्धियों ने उसकी सारी जमीन-जायदाद हड़प ली और माधवी को कानी-कौड़ी भी न दी।

गुणभूषण, माधवी को छुटपन से जानता था। वह जब बड़ा हुआ तो छुटपन का प्यार, प्रेम में बदल गया। उसने उसकी भरसक सहायता की। वह उससे शादी करने की सोच रहा था। पर उसके पिता को यह सब पसन्द न था। उसने अपने लड़के से कहा भी कि वह उससे किसी प्रकार का सम्बन्ध न रखे। उसने यह भी धमकी दी कि अगर वह उससे मिलता रहा तो वह उसे घर से भी निकाल देगा। गुणभूषण ने पिता की धमकी की परवाह न की। वह माधवी से मिलता रहा। समय समय पर उसे धन भी देता रहा। आखिर उसके पिता ने उसको घर से निकाल दिया।

गुणभूषण को सारी स्थिति मालूम हो गई। काशी आकर उसने राजा के यहाँ नौकरी कर ली। नौकरी में कुछ तरक्की होने के बाद, उसने माधवी को बुलवाकर

उससे शादी करने की सोची। परन्तु इतने में षड्यन्त्र की बात उठी और उसके सपने सपने ही रह गये।

उधर मगध देश में माधवी भी गुणभूषण के भरोसे बैठी थी। वह बड़ी खुश थी कि गुणभूषण को काशी के राजा के यहाँ नौकरी मिल गई थी। जब कभी कोई मगध से काशी जाता तो उनके द्वारा अपने कुशल समाचार वह गुणभूषण के पास पहुँचाती।

इतने में माधवी को खबर मिली कि काशी में राजद्रोहियों को फाँसी पर चढ़ा दिया गया था। जब उसे पता लगा कि उनमें अधिक मगधवासी थे तो उसका भय और भी अधिक हो गया। उसे न मालूम था कि राजद्रोहियों में गुणभूषण था कि नहीं। वह पंख लगाकर, उड़कर तुरत काशी पहुँचना चाहती थी। पर वह सम्भव न था।

थोड़े दिनों बाद उसे काशी जाने का मौका मिला। तीर्थ यात्रा पर उसके कुछ परिचित जा रहे थे, उनके साथ वह भी निकल पड़ी।

यात्री कई तीर्थ और धाम-घूम कर, कुछ महीनों बाद काशी पहुँचे। काशी

पहुँचने पर गुणभूषण के बारे में मालूम किया। उसे पता लगा कि गुणभूषण उन राजद्रोहियों में न था, जिनको फाँसी दे दी गई थी, पर वह कैद में सड़ रहा था।

"गुणभूषण कभी विद्रोह न करेगा। उसे बिना किसी कारण के कैद में डाल रखा है। उसको कैद से कैसे छुड़ाया जाय!" उसने बड़े लोगों से पूछा।

"मन्त्री कैलासनाथ की मर्ज़ी हो तो वह क्षण में कैद से छोड़ा जा सकता है। अच्छा होगा यदि गुणभूषण के कुछ निकट विश्वासपात्र मित्र उससे जाकर बात करें।" बड़े बुजुर्गों ने माधवी से कहा।

निकट बन्धु-बान्धवों ने तो गुणभूषण का पहिले ही बहिष्कार कर रखा था। इसलिए माधवी ने निश्चय किया कि वह स्वयं मन्त्री के पास जायेगी और कहेगी कि वह उसकी बहिन है। उसको छोड़ने के लिए उससे प्रार्थना करेगी।

उसे मन्त्री का दर्शन आसानी से मिल गया। माधवी को देखते ही मन्त्री कैलासनाथ उस पर मुग्ध हो गया। वह

सुन्दर ही नहीं, बड़ी सीधी-सादी थी। कहीं उसमें छल कपट का नाम न था। उसमें विनय व नम्रता थी। वह जल्दी ही जान गया कि उसका हृदय अति कोमल था। गुणभूषण की बात आते ही उसकी आँखों से आँसुओं की धारा बहने लगी।

"मैं उसकी हूँ और वह मेरा है, हम दोनों का और कोई नहीं है। मेरी बात मानिये। वह प्राण खो देगा पर राजद्रोह कभी न करेगा। आप उसे छोड़ दीजिये।" उसने मन्त्री से कहा।

"तुम्हारे भाई ने विद्रोह किया है, यह सचमुच साबित नहीं हुआ है। पर उसके बारे में कोई कुछ नहीं जानता है। अगर तुम उसको अपने साथ अपने देश ले गये तो मुझे उसको छोड़ देने में कोई आपत्ति नहीं है। तुम्हे देखने से यह लगता है कि तुम बड़े घर की लड़की हो, वह भी तुम जैसा ही होगा।" मन्त्री ने कहा।

"मेरा भाई सचमुच बहुत अच्छा है। मैं भी उसी के भरोसे जी रही हूँ।" माधवी ने कहा।

"यह क्यों ऐसा हुआ! क्या तुम्हारा अभी तक विवाह नहीं हुआ है!" मन्त्री ने उससे पूछा।

माधवी ने लजाते हुए कहा—"जब वह कैद में है तो मेरा विवाह कैसे हो सकता है!"

मन्त्री ने माधवी से अगले दिन मिलने के लिए कहा और गुणभूषण को सिपाहियों द्वारा बुलवाया। माधवी ने उसे बहुत आकर्षित किया। उसे लगा कि यदि वह उसकी पत्नी बन गई तो उसके जीवन में कोई कमी न रहेगी वह यद्यपि

रोज कितनी ही स्त्रियों को देखता था तो भी उसे कभी इस तरह दुबारा शादी करने की इच्छा न हुई थी। सिपाही गुणभूषण को साथ लेकर आये। मन्त्री ने उसे बिठाकर कहा—"तुम्हारी बहिन ने मेरे पास आकर तुम्हें छोड़ने के लिए मुझसे कहा। वह बहुत योग्य और अक्लमन्द दिखाई दी। सुना है, तुमने उसके लिए बहुत-से कष्ट झेले। उस जैसी बहिन के लिए अगर कष्ट झेलने पड़ते तो न जाने मैं कितने कष्ट झेलता। अगर तुम अपने देश वापिस जाना मान लो तो मैं तुम्हें कैद से छुड़वा दूँगा।"

"आपकी कृपा के लिए कृतज्ञ हूँ। परन्तु मैं अपने देश वापिस नहीं जाऊँगा। वहाँ सिवाय माधवी के मेरा कोई नहीं है। मैं उसे यहाँ लिवा लाना चाहता था कि मुझपर राज-द्रोह का अपराध लगा दिया गया।" गुणभूषण ने कहा।

मन्त्री ने एक क्षण सोचकर कहा—"अगर तुम्हें अपने देश पर अभिमान न हो तो तुम काशी राज्य के विरुद्ध विद्रोह नहीं कर सकते। इसलिए राजा से कहकर, मैं फिर तुम्हें नौकरी दिल्वा दूँगा।"

"मैं आपका उपकार कभी न भूलूँगा।" गुणभूषण ने आनन्दित होकर कहा।

"जरा बैठो। मैं तुमसे एक बात कहना चाहता हूँ।" मन्त्री ने कहा। यह बात सुन गुणभूषण हैरान रह गया।

"मुझ से फिर शादी करने के लिए कई ने कई बार कहा। कई ने कहा कि वे मुझे अपनी लड़की देंगे, कई ने कहा कि अपनी बहिन देंगे। परन्तु मुझे विवाह करने की मर्जी ही न हुई। किन्तु आज तुम्हारी बहिन को देखकर लगा कि वैसी स्त्री मेरी पत्नी हो सकी तो मेरा जीवन धन्य हो जायेगा।

क्या तुम उससे मेरी सिफ़ारिश कर सकोगे?" गुणभूषण का आश्चर्य और भी बढ़ गया।

"आपकी बात के बारे में कहने से पहिले मुझे एक बात साफ़ साफ़ कहने दीजिये। अगर मुझे फिर से नौकरी दिल्वाने का कारण माधवी ही हो तो यह बात बताना आवश्यक है। मैं बिल्कुल निर्दोषी नहीं हूँ। मेरा षड़यन्त्र से कोई सम्बन्ध नहीं था। पर मैं यह जानता था कि वह हो रहा है। एक षड़यन्त्रकारी हमारे देश में बहुत प्रभावशाली है। माधवी वस्तुत: मेरी बहिन नहीं है। मैं उससे विवाह करने की सोच रहा हूँ। उसका पिता करोड़पति है। उसकी सारी सम्पत्ति सम्बन्धियों ने हड़प ली और उसे कानी कौड़ी भी न दी। इस षड़यन्त्रकारी ने मुझे वचन दिया कि वह माधवी की सम्पत्ति उसे दिला देगा। यद्यपि मैं राजा का नमक खा रहा था तो भी, क्योंकि उसने माधवी की सहायता करने का वचन दिया था, इसलिए मैंने उसके षड़यन्त्र के बारे में किसीसे कुछ नहीं कहा। इसलिए मैं भी राजद्रोही हूँ। क्योंकि यह सब बिना छुपाये आपको बता दिया है

अब आपकी बात का जवाब भी देता हूँ। सुनिये, मैं माधवी से कहूँगा कि आप उससे विवाह करना चाहते हैं और आपसे अधिक योग्य पति उसे नहीं मिल सकता मेरा भी यही विश्वास है। उसके बाद अगर वह चाहेगी तो आपसे विवाह करेगी। नहीं तो नहीं करेगी। उसको जबर्दस्ती आपसे विवाह करने के लिए प्रेरित करना मेरे अधिकार में नहीं है।" गुणभूषण ने कहा।

"क्या कह रहे हो! तुम मेरी सिफ़ारिश न करना। उसी के लिए तो तुम्हारी यह नौबत आई कि राजद्रोही का सजा भुगत रहे हो। तुम्हारा ही उसके साथ विवाह होना उचित है।" कहकर मन्त्री ने तुरन्त उसके छुटकारे की आज्ञा दी।

फिर उसने राजा के यहाँ गुणभूषण को बड़ी नौकरी भी दिलवाई। उसका माधवी के साथ बड़े धूम-धाम से विवाह हुआ।

यह कहानी सुनाकर बेताल ने कहा—"राजा! गुणभूषण जब कैद से छूट रहा था तब भी उसने न चाहा कि मन्त्री उसको निरपराधी समझकर छोड़े। इसलिए उसने सच कहकर अपने और माधवी के प्राण खतरे में डाले। कैलासनाथ यदि चाहता

तो गुणभूषण को राजद्रोह की सजा दे सकता था और माधवी से विवाह कर सकता था। पर उसने वह न किया। इन दोनों में किसका बल्दान अधिक है ? अगर जान बूझकर तुमने उत्तर न दिया तो तुम्हारा सिर फूट जायेगा।"

"निस्सन्देह गुणभूषण का बल्दिान अधिक बड़ा है। उसका जो प्रेम माधवी के प्रति था, वह अत्युत्तम था। यह जानकर कि मन्त्री का प्रेम भी वैसा न होगा, उसने सब कुछ साफ़ साफ़ कह दिया। नहीं तो उसके लिए यह कहने की जरूरत न थी कि माधवी उसकी बहिन न थी और वह षड्यन्त्र के बारे में जानता था। जिसमें निष्कलंक प्रेम होता है, वह प्रेम के परिणाम से डरता नहीं है। गुणभूषण यह न चाहता था कि मन्त्री, माधवी के प्रति अपने प्रेम के कारण उसको निर्दोष समझे। इसलिए उसने अपने प्राण और माधवी को बल्दिान करना चाहा। सच पूछा जाय तो मन्त्री का बल्दिान उतना बड़ा नहीं है। क्यों कि जब उसने उससे प्रेम किया था। तब वह इतना ही जानता था कि गुणभूषण उसका भाई है और उसके सिवाय उसके और कोई नहीं है। इसलिए उसने सोचा कि उसके प्रेम का कोई प्रतिद्वन्दी न था। जब उसे मालूम हुआ कि गुणभूषण उसका प्रियतम है तो उसका यह विचार जाता रहा। अगर गुणभूषण को फाँसी दिल्वाकर वह माधवी से शादी भी कर लेता तो उसे कोई सुख न मिलता। इसलिए गुणभूषण का बल्दिान ही बड़ा है। उत्तम है।" विक्रमार्क ने जवाब दिया।

राजा का इसप्रकार मौन भँग होते ही, बेताल शव के साथ अदृश्य होकर, पेड़ पर जा बैठा। (कल्पित)

प्रकृति के आश्चर्य

[३]

यहाँ नदी में पत्थर-चट्टानें थीं। प्रवाह बहुत तेज था। हम चट्टानों के बीच घुसे। बहाव हमारी नाव को इधर-उधर धकेल रहा था।

"अब चप्पू न चलाओ, न्यिकूचाप।" वह लड़का चिल्लाया।

मैं चप्पू छोड़कर, डरने लगा कि जाने कब हमारी नाव किस चट्टान से टकरायेगी और कब वह टुकड़े टुकड़े हो जायेगी। परन्तु वह लड़का, बड़ी होशियारी से चप्पू चलाता, ऐसे प्रवाह में नाव को लाया जहाँ अधिक भँवरें न थीं। परन्तु बहाव की तेजी निरन्तर बढ़ती जाती थी। एक बार तो ऐसा लगा कि जैसे नाव पत्थर से टकरा ही गई हो। "न्यिकूचाप! अब चप्पू लगाओ! सारा जोर लगाओ!" वह लड़का जोर से चिल्लाया। नदी के भयंकर गर्जन में मुझे उसकी आवाज मुश्किल से सुनाई दी।

मैं जोर से चप्पू चलाने लगा। कुयेबाबा का बल-स्फूर्ति देखकर मैं बहुत खुश हुआ। पत्थर बहुत पास था और हम टकरानेवाले ही थे कि उसने नाव को जोर से पानी में धकेल दिया। नाव दायीं ओर हटी, और पत्थर से दो फीट परे हटकर आगे बढ़ी। अगर लड़का अपनी अक्लमन्दी और फुर्ती न दिखाता तो हम चकनाचूर हो गये होते। लाश भी कहीं खोजे नहीं मिलती।

फिर थोड़ी देर तक पत्थरों से बचते, हम नदी के ऐसे भाग में पहुँचे जो शान्त था। दोनों थक गये थे। कुयेबाबा नाव

के अगले भाग में लेट गया। मैं उसके सामने लेट गया। उसके मुँह पर मुस्कान थी। आकाश में कपास से बादलों को देखते हुए उसने विश्राम किया। नाव बिना हिले डुले बहाव के साथ आगे आगे बढ़ रही थी। चप्पू छोड़ दिये थे। हम निश्चिन्त थे।

"तू अक़्लमन्द है, इसलिए हम यहाँ से बचकर निकल पाये।" मैंने उससे धीमे से कहा।
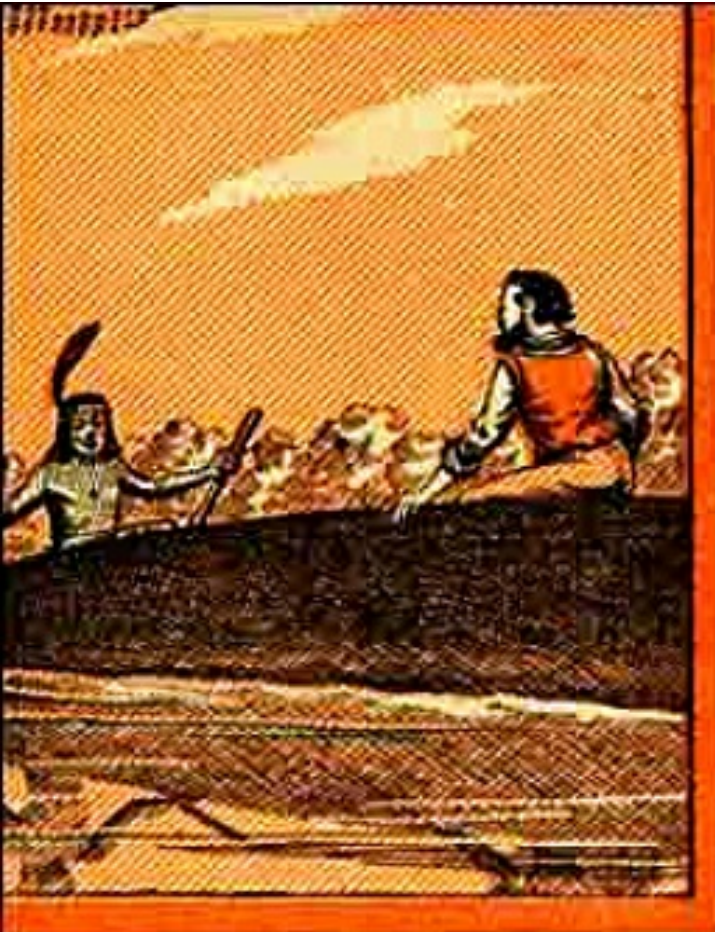
"मलोथा बाबा कहता है कि यदि हमने पानी और जंगली जानवरों को वश में न किया तो वे ही हमें वश में कर लेते हैं। इससे आसान रास्ता है। पर इधर से आने में ही मज़ा है। यहाँ पानी बहुत गहरा है, आओ, मछली पकड़ें।" लड़के ने कहा।

उसके कहने के मुताबिक, नाव के पिछले भाग में बैठकर, उसके संकेतों के अनुसार, दाएँ और बाएँ हाथ से धीमे धीमे चप्पू चलाने लगा। वह धनुष और बाण लेकर अगले भाग पर खड़ा था। उसका शरीर ऐसा था मानों उस पर किसी ने काँसे की कलई कर दी हो। उसके पीछे प्रातःकालीन नीला आकाश था। उसके काले केश कन्धों तक लटक रहे थे। उसकी नाक में एक नथ सी थी। उसके गालों पर दो छल्ले-से गुदे हुए थे। करजा जाति के लोगों की ये ही निशानियाँ हैं। उसके सिर के चारों ओर एक पतली हरी पट्टी बंधी थी। उसके पिछले भाग में गरुड़ का एक पँख लगा हुआ था। उसकी वेष-भूषा, सिर्फ़ एक कमर-बन्द और कौपीन मात्र थी। बाकी बदन कतई नंगा था। वह खड़ा खड़ा पानी की ओर लगातार देख रहा था।

उसने यकायक बाण छोड़ा। वह पानी में घुस गया। हम इस इन्तजार में थे कि वह कब फिर ऊपर आता है। जब बाण के पँख पानी के ऊपर दिखाई दिये तो उसने अपने धनुष से उसे पास खींचा। बाण की नोंक पर दो फ़ीट बड़ी मछली छटपटा रही थी। उसने मछली को बाण से अलग करके नाव में डाल दिया। वह तब भी तड़प रही थी।

आध एक घंटे में, उसने पाँच छ: मछलियाँ और पकड़ीं। उसमें दो मछलियाँ पहिली मछली से भी बड़ी थीं। लड़के ने बाण नीचे रख दिये। बरछी लेली। उसकी लकड़ी को अगले भाग में बाँधकर, वह रस्सी को ध्यान से देखने लगा। मुझे ऐसा लगा जैसे उसे कोई बड़ी मछली दिखाई दे गई हो। उसने झुककर खड़े होकर देखा। आखिर उसने नाव को दाईं तरफ़ खेने के लिए इशारा किया। उसने यकायक दाएँ हाथ की बरछी को ज़ोर से पानी में फेंका।

कुछ देर तक हम यह न जान सके कि बरछी निशाने पर लगी थी कि नहीं। वे दो चार घड़ियाँ हमें युग की तरह लगीं। आखिर बरछी की लकड़ी पानी के ऊपर आई और दूर जाती दिखाई दी। सारी रस्सी पानी में थी। वह तन गई थी। इसलिए हमारी नाव भी खिंचने लगी। पानी की तह में कोई प्राणी हमारी नाव खींच रहा था। वह घायल था, इसलिए वह नाव को इधर उधर झकझोर रहा था। खड़े रहने से पानी में गिरने की सम्भावना थी। इसलिए कुयेबाबा, नाव के अगले भाग में लेट गया। बड़ी विषम परिस्थिति में थे हम।
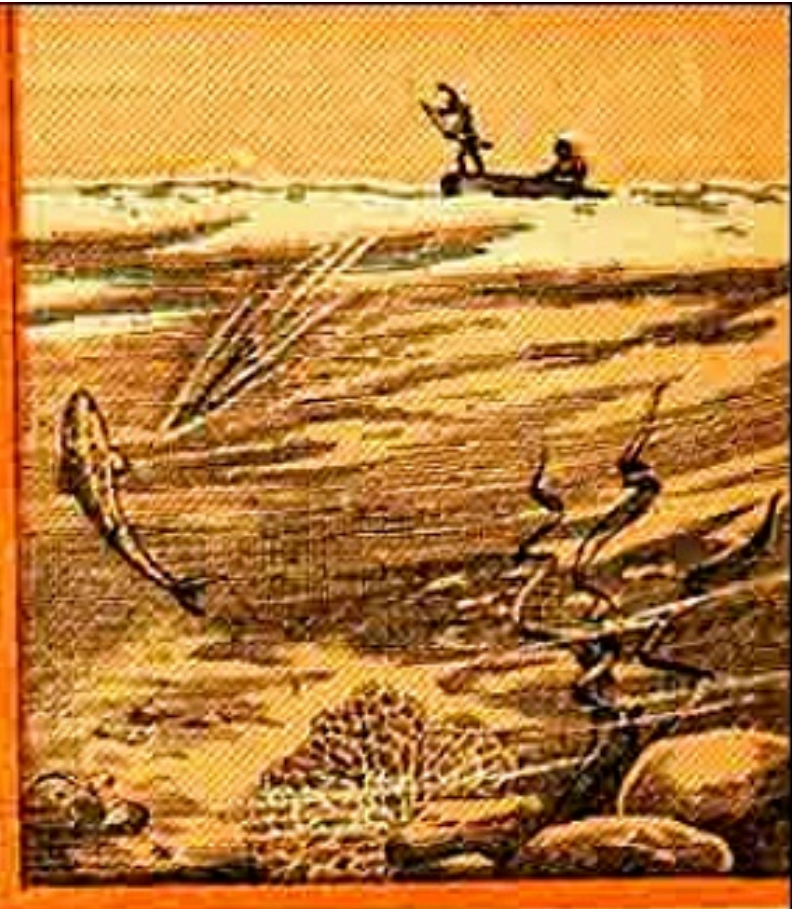
दस मिनट तक तो उसने नाव को खूब खींचा, खरोंचा। फिर घायल मछली का ज़ोर

कम हो गया। अब हम रस्सी को खींचने लगे। रस्सी के खतम होते ही बरछी से लगी "पिरारकू" नाम की मछली हाथ में आई। इस मछली की लम्बाई दो गज थी। अमेजान नदी में मिलनेवाली मछलियों में यह सबसे अधिक स्वादिष्ट समझी जाती है।

इस मछली को नाव में डालने के बाद, बैठकर आराम करते समय मैंने उस लड़के की शक्ति व बुद्धिमत्ता की प्रशंसा की। उसने मेरी प्रशंसा की परवाह न की। "सब जन्तुओं को अपना आहार पाने की विद्या आनी चाहिए। आदमियों को भी।" उसने कहा।

"पर तुम तो अभी बहुत छोटे हो।" मैंने कहा।

"मेरे गालों पर गुदे हुए इन छल्लों को क्यों नहीं देखते? इसका मतलब है कि मैं बड़ा हो गया हूँ।" उसने कहा।

"ऐसी बात है! यह क्या है, ज़रा विस्तार से तो कहो।" मैंने कहा।

"अभी समय नहीं है। अगर हम बात करेंगे तो मछलियाँ भाग जायेंगी और वहाँ तेरे मित्र भूखे मरेंगे।" उसने कहा।

"फिर भी यह क्या गुदा हुआ है, बताओ तो। मुझे उसके बारे में मालूम करने की इच्छा है।" मैंने कहा।

"धैर्यशाली को सत्य मालूम हो जाता है—यह मलोबा बाबा कहता है।" उसने कहा।

मैं कुछ न बोला। मैंने यह दिखाने की कोशिश की कि मैं भी धैर्यशाली हूँ। परन्तु मैं उस विषय को जानने के लिए अन्दर ही अन्दर उतावला हो रहा था।

(अभी और है)

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता

दिसम्बर १९५८ :: पारितोषिक १०)

कृपया परिचयोक्तियाँ कार्ड पर ही भेजें।

ऊपर के फ़ोटो के लिए उपयुक्त परिचयोक्तियाँ चाहिये। परिचयोक्तियाँ दो-तीन शब्द की हों और परस्पर संबन्धित हों। परिचयोक्तियाँ पूरे नाम और पते के साथ कार्ड पर ही लिख कर निम्नलिखित पते पर ता. ७, अक्टूबर '५८ के अन्दर भेजनी चाहिये।

फ़ोटो - परिचयोक्ति - प्रतियोगिता
चन्दामामा प्रकाशन
वडपलनी :: मद्रास - २६

अक्टूबर - प्रतियोगिता - फल

अक्टूबर के फ़ोटो के लिए निम्नलिखित परिचयोक्तियाँ चुनी गई हैं। इनके प्रेषक को १० रु. का पुरस्कार मिलेगा।

पहिला फ़ोटो : **लो, हम नीचे चलें!**
दूसरा फ़ोटो : **हम भी आते हैं!!**

प्रेषक : **पुरुषोत्तमदास गुबरेले "अनजान"**
बखरिया मोहल्ला, होशंगाबाद (म. प्र)

चित्र - कथा

एक दिन दास और वास "टाइगर" को साथ लेकर अमरूद के बाग में गये। एक एक करके उन्होंने कई अमरूद तोड़े। फिर वे अपना टोकरा भरने लगे। जब वे अमरूद लाकर टोकरे में रखने गये तो वहाँ टोकरा न दिखाई दिया। उन्होंने आसपास देखा तो किसी जन्तु के पैर के निशान दिखाई दिये। "टाइगर" निशानों पर चलने लगा। यह सोचकर कि शायद कोई चीता या शेर होगा। वे डरते-डरते उसके पीछे चलने लगे। पर जब उन्होंने मेंड से नीचे देखा तो टोकरे में से अमरूद खाता एक गधा रेंका।

Printed by B. NAGI REDDI at the B. N. K. Press Private Ltd., and Published by him for Chandamama Publications, from Madras 26.—Controlling Editor: SRI 'CHAKRAPANI'

Photo by K. K. Nair

पुरस्कृत
परिचयोक्ति

हम भी आते हैं !!

प्रेषक :
पुरुषोत्तम दास गुबरेले, होशंगाबाद

CHANDAMAMA (Hindi) OCTOBER 1958 Regd. No. M. 5452

रूपधर की यात्राएँ